ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 22 नवम्बर 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 22 नवम्बर 2015 से 28 नवम्बर 2015

का.शु. –11● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 47, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. कॉलेज जालन्धर में ''इंदर नारायण सरस्वती भगत ब्लाक'' का हुआ भव्य लोकार्पण

डी.ए.वी. कॉलेज जालंधर की विरासत में एक और नायाब हीरा जुड़ गया जब नए ब्लाक ''इंद्र सरस्वती भगत ब्लाक'' का भव्य उद्घाटन हुआ।

उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि श्री केवल कृष्ण भगत और उनकी धर्म पत्नी श्रीमती सुनीता भगत थे, जिनका कॉलेज परिसर में बैंड की धुन पर गर्मजोशी से स्वागत किया गया। डी.ए.वी. प्रबंधन समिति, नई दिल्ली से डॉ. सतीश शर्मा (डायरेक्टर कॉलेजस), प्रिंसिपल ऍम एल ऐरी (डायरेक्टर नर्सिंग कॉलेजस), प्रिंसिपल डॉ. बी.बी शर्मा, सेठ कुंदन लाल अग्रवाल (चेयरमैन स्थानीय सलाहकार समिति) ने पुष्प मालाएं पहना कर श्री के के भगत जी का स्वागत किया।

उद्घाटन समारोह की शुरुआत हवन यज्ञ से हुई। हवन की पवित्र अग्नि से पूरा वातावरण सुवासित हो गया। श्री के के भगत जी सप्तर्नाक यजमान बने।

इसके पश्चात श्री के के भगत, श्रीमती सुनीता भगत, डॉ सतीश शर्मा और डॉ. बी. बी. शर्मा नये ब्लाक का उद्घाटन किया। विधि विधान से इस भवन के निर्माण में सबसे अधिक योगदान कॉलेज के पुराने छात्र श्री केवल कृष्ण भगत जी का रहा, उन्होंने कॉलेज को इस निर्माण के लिए एक महत्वपूर्ण राशि का अनुदान दिया।

मुख्य अथिति श्री भगत नें कहा, कि शिक्षा से ही समाज का विकास संभव है। विकास कार्यो में भी शिक्षा के क्षेत्र में सुविधाओं में विस्तार किया जाना हम सबकी पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। उन्होंनें कहा मुझे खुशी भी है और गर्व भी कि मैं अपने कॉलेज के लिए अपने कर्तव्य को निभा पाया। मेरी कोशिश रहेगी कि मैं आगे भी अपनी मातृ संस्था के लिए मदद करता रहूँगा।

भवन में बड़े और हवादार 12 कमरों के इलावा फूड, साइंस एंड टैक्नोलॉजी की चार आधुनिक प्रयोगशालाएं भी है। स्टाफ रूम के इलावा इसमें एइक बड़ा और आधुनिक समेनार हॉल भी है जिसमें 150 से अधिक छात्रों के बैठने की क्षमता है।

डॉ. सतीश शर्मा (डायरेक्टर कॉलेजस) नें कहा, आज का दिन हम सब के लिए गौरव का दिन है। ''श्री भगत जी एक महान आदमी है और प्रतिबद्धता की जीती जागती मिसाल है'' वह आज भी अपने देश, अपनी संस्कृति, अपने सभ्यता की जड़ों से जुड़े हुए हैं। कई साल पहले इसी कॉलेज से पढ कर विदेश में जा कर एक सफल व्यवसायी बनने के पश्चात् भी उन्हें अपना देश, अपना कॉलेज याद है। अपने जड़ों से जुड़े रहे। कॉलेज भी अपने इस छात्र पर गर्व महसूस करता है और हमेशा खुली बाँहों से उनका और उनके परिवार का स्वागत करता रहेगा।

प्रिंसिपल डॉ. बीबी शर्मा ने कहा कि उनको बहुत खुशी है कि इस कॉलेज में से पढ़ कर गए विद्यार्थी बड़े–बड़े पदों पर तैनात हैं अथवा सफल व्यवसायी हैं। डा. शर्मा ने पुराने विद्यार्थियों की एसोसिएशन और प्रवासी भारतीयों से मिलने वाले सहयोग के लिए उनका धन्यवाद किया, उन्होनें खास तौर पर मुख्य अतिथि श्री के के भगत और उनके परिवार का धन्यवाद करते हुए कहा कि मेरी परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वे उन्हें लंबी आयु दें ताकि वह विदेशों में जाकर भी भारत की सेवा करते रहें।

खन्ना में डी.ए.वी. संस्थाओं ने निकाली स्वच्छता पर जन चेतना रैली

खन्ना नगर की डी.ए.वी. संस्थाओं (हिन्दी पुत्री पाठशाला सी.सै. डी.ए.वी. मॉडल सी. सै. स्कूल तथा डी.ए.वी. पब्लिक सी. सै स्कूल खन्ना) के 1500 छात्र–छात्राओं तथा अध्यापक–अध्यापिकाओं द्वारा प्रधाना श्रीमती सरोज कुन्दरा जी की अध्यक्षता में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा चलाए 'स्वच्छ भारत अभियान' में सहयोग देते हुए शहर में जन चेतना रैली निकाली गई जिसका शहर निवासियों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ा। खन्ना के एस. डी.एम. श्री परमदीप सिंह खेड़ा ने हरी झंडी दिखाकर रैली को रवाना किया। बच्चों नेपूर्ण उत्साह के साथ हम सब का एक ही नारा, साफ सुथरा हो देश हमारा'; 'सफाई अपनाएं, बीमारी हटायें'; 'वृक्ष लगाओ, हरियाली लाओ'; आदि नारे लगाते हुए नगर निवासियों तक अपनी आवाज् पहुंचाने की कोशिश की।

मैनेजर श्रीमती सरोज कुन्दरा जी ने रैली को संबोधित करते हुए कहा कि यद्यपि विज्ञान में हम बहुत आगे निकल चुके हैं परन्तु गंदगी का कलंक अभी भी विदेशों के सामने हमारा सिर शर्म से झुका देता है। उन्होंने कहा कि अगर प्रत्येक व्यक्ति सफाई के महत्व को जान ले तो हम इस समस्या पर बड़ी आसानी से काबू पा सकते हैं। एस.डी.एम. खन्ना ने बच्चों को संबोधित करते हुए कहा कि महात्मा गांधी जी ने कहा था कि स्वच्छता स्वतन्त्रता से ज्यादा जरूरी है। उन्होंने कहा कि स्वच्छता के साथ–साथ अनुशासन अनवार्य है और युवा पीढ़ी के सहयोग से हम अपने देश को स्वच्छ और खुशहाल बना सकते हैं।

इस रैली में चेयरमैन, श्री कुलभषण राय सोफत, प्रि. रजनी वर्मा, प्रि. अनीता वर्मा, श्री विजय मोहन भांबरी जी ने बच्चों और अध्यापकों को प्रोत्साहन तथा निर्देशन देकर रैली को पूर्ण सफल बनाया। रैली से एक दिन पहले स्थानीय डी.ए.वी. संस्थाओं के इन्हीं बच्चों ने शहर की गलियों में घर–घर जाकर लोगों से सफाई रखने, पर्यावरण सुरक्षा, पोलीथीन का प्रयोग न करने और बिजली और पानी का उचित प्रयोग करने के लिए प्रार्थना की तथा पैम्फलैट बांटे।

इसके अतिरिक्त पर्यावरण शुद्धता हेतु हिन्दी पुत्री पाठशाला में हैबिस्कस फाईकस, पाम, अशोका, गुलाचीन, अमलतास तथा चीड़ इत्यादि के पौधे लगाए गए।

सप्ताह भर डी.ए.वी. हरिपुरा में चला वेद प्रचार

डी.ए.वी. विद्यालय हरिपुरा में वेद प्रचार सप्ताह की शुरुआत विद्यालय प्रांगण में प्रातः कालीन हवन एवं मंत्रोचारण से शुरू की गई। विद्यालय में आर्य समाज के तहत अधिक से अधिक छात्रों के पैतृक गांवो में आर्य समाज का प्रचार करने का निर्णय किया गया। गांव शेरगढ के एक विद्यालय में महर्षि दयानन्द की जीवनी का कवि प्रदीप द्वारा रचित ऑडियो टेप सुनाया गया। अगले दिन विद्यालय में हवन के बाद प्रातःकालीन सभा में अमरशहीद 'राजगुरु जयन्ती के उपलक्ष्य में देष के अमरषहिदों को याद कर उन्हें भावभी श्रद्धांजलि दी गई। अगले हवन के बाद बालकों ने संस्कृत श्लोक एवं मंत्रोचारण किया। महामना पंडित गंगाप्रसाद उपाध्याय की स्मृति में हवन के बाद विद्यार्थियों को उनके जीवन के बारे में बताया गया।

वेद प्रचार सप्ताह के सफल आयोजन करने एवं छात्रों के दिलोदिमाग में वेदों के प्रति एवं आर्य समाज के प्रति अलख जगाने के लिए विद्यालय के प्राचार्य एवं चैयरमेन ने अध्यापकों को धन्यवाद एवं बधई दी।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 22 नवम्बर, 2015 से 28 नवम्बर, 2015

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः रेणुः वैश्वामित्रः। देवता पवमानः सोमः। छन्दः जगती।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचा ओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामी जी ने प्रभुदर्शन के मार्ग में आने वाली बाधाओं की बात करते हुए लोभ को तीसरी बाधा बताया और फिर अतिथि, भय और चिन्ता की बात की।

सब चिन्ताओं को त्याग देने से रुकावटें–वासना, क्रोध, लोभ, मोह, भय और शोक दूर कर दें तो प्रभु का दर्शन होता है अवश्य। परन्तु यह सारा झगड़ा जहाँ से प्रारम्भ होता है वह है वासना।

किसी भी कार्य में अति न करो, भगवान के भजन में भी अति करना कभी–कभी रुकावट का कारण बन जाता है। एक दिन ऐसी अशान्ति हृदय में उत्पन्न होगी कि सब किया कराया चौपट हो जायेगा। यह अति जिस प्रकार बुरी है, उसी प्रकार यह अति भी बुरी है कि प्रभु को भूल जायें। इस अति से भी विनाश होता है।

अब आगे...

भगवान् बुद्ध से पूर्व यज्ञ की प्रथा बहुत ज़ोरो पर थी। उसका रूप बिगड़ गया था। इस बिगड़े रूप की अति हो रही थी। पशुओं को इनमें काटा जाता था। कभी–कभी नर–बलि भी दी जाती थी। बुद्ध ने इस बात को देखा। यज्ञ के विरुद्ध ही प्रचार कर दिया। एक अति पहले हो रही थी, दूसरी अति बुद्ध ने कर दी। लोगों ने पूछा "तुम यज्ञ को मानते हो?" बुद्ध बोले, "नहीं।" उन्होंने पूछा, "वेद को मानते हो" बुद्ध बोले, "नहीं।" प्रश्न हुआ, "ईश्वर को मानते हो?" बुद्ध ने उत्तर दिया "नहीं।" संसार पहले ही अन्धकार में था, तब दूसरे अन्धकार में जा गिरा। बुद्ध के पश्चात् जगद्गुरु शंकराचार्य आए। उन्होंने एक और अति की। बुद्ध ने कहा था, "ईश्वर नहीं है।" शंकर ने कहा, "सब–कुछ ईश्वर ही ईश्वर है, उसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।" शताब्दियों के पश्चात् महर्षि दयानन्द आए। उन्होंने वास्तविकता को संसार के समक्ष रखा। अति का मार्ग छोड़कर सत्य मार्ग अपनाते हुए कहा– ईश्वर भी है, आत्मा भी है, प्रकृति भी है। प्रकृति सत् है, आत्मा सत्–चित् है, ईश्वर सत्–चित् और आनन्द है। यह अति सदा कार्य को बिगाड़ती है–

अति रूपेण वै सीता अति गर्वेण रावणः।
अति दानात् बलिर्बद्धो ह्यति सर्वत्र वर्जयेत्।।

बहुत रूपवती होने से सीता संकट में फँसी। बहुत अभिमानी होने से रावण मारा गया। बहुत दान करने से राजा बलि बाँधे गए। यह अति अच्छी नहीं।

अंग्रेजी भाषा में कहा है–

Too much of every thing is bad.

अति हर बात में बुरी है–

अति का भला न बोलना,
अति की भली न चुप्प।
अति का भला न बरसना,
अति की भली न धुप्प।।

इन सब–की बस रुकावटों को दूर करके भक्त प्रार्थना करता है–

अरं दासा मीडहुषे कराण्यहं देवाय भूणयेऽनागाः।
अचेतयदचितो देवो अर्यो राये कवितरो जुनाति।।

(ऋ. 7 । 86 । 7)

इस मन्त्र का अर्थ है–

"ओ मेरे प्रभु! आनन्द को देनेवाले मेरे देवता! मैं पापों को छोड़कर तेरा दास बनकर तेरे पास आया हूँ। मेरे चमकते हुए परमेश्वर, कृपा कर! तू दानियों का दानी महादानी है, सबका पालन करनेवाला है, सबका स्वामी है। जो अँधेरों में भटकते हैं उन्हें तू प्रकाश देता है, उनके अज्ञान को ज्ञान में बदलकर उन्हें अविद्वान् से विद्वान् बनाकर उनके भक्ति भरे गीत सुनता हुआ तू उन्हें उस मार्ग पर ले जाता है जिसका लक्ष्य आनन्द है, परम आनन्द है।"

और सुनो! यह अज्ञान को ज्ञान में बदलने की बात, अँधेरे में भटकते हुए को प्रकाश दिखाने की बात, केवल कविता नहीं, यह सत्यता है ईश्वर बोलता है, आवाज़ देता है, स्पष्ट रूप से कहता है, "ऐसा न कर।" महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थप्रकाश' में स्पष्ट लिखा है–?

"जब आत्मा मन और इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता व चोरी आदि बुरी व परोपकार आदि अच्छी बात के करने का जिस क्षण में आरंभ करता है उसी समय जीव की इच्छा–ज्ञान आदि उसी इच्छित विषय पर झुक जाते हैं, उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे कर्मों के करने में अभय, निश्शंकता और आनन्द–उत्साह उठता है जो जीवात्मा की ओर से नहीं किन्तु परमात्मा की ओर से है।"
(सातवाँ समुल्लास)

ईश्वर प्रतिक्षण प्रेरणा देता रहता है। हर समय सावधान करता है। हर समय उसकी आवाज़ आती है, "रुक जाओ! आगे न बढ़ो, खतरा है!"

कई भाई कहते हैं कि हमको तो ऐसी आवाज़ सुनाई नहीं देती। वस्तुतः उन्हें सुनाई नहीं देती। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि

उनके भीतर यह ध्वनि उत्पन्न नहीं होती। आप एक कमरे में बैठे हैं, बिल्कुल एकान्त है, बिलकुल नीरवता, शान्ति। दीवार पर लगी घड़ी की आवाज के अतिरिक्त कोई आवाज़ नहीं। टिक, टिक, टिक लगातार वह चल रही है। तभी नीचे बाज़ार में जुलूस निकलने लगता है। उसके बाजों की आवाज़ कान फाड़े डालती है। नारे लगानेवालों ने आसमान सिर पर उठा रखा है। आपको घड़ी की आवाज़ आनी बन्द हो गई?" आप आश्चर्य से दीवार की ओर देखते हैं– "क्या घड़ी बन्द हो गई?" नहीं, बन्द हुई तो प्रतीत नहीं नही होती। उसका पैण्डुलम हिल रहा है, फिर आवाज़ क्यों नहीं आती? तभी आपको ध्यान आता है और आप उस खिड़की को बन्द कर देते हैं जो बाज़ार की तरफ खुलती है। उसके बन्द होते ही नीचे से आने वाला कोलाहल बन्द हो जाता है। घड़ी की आवाज़ फिर सुनाई देने लगती है।

सुनो मेरी माताओ! सुनो मेरे बच्चो! जब तक बाहर होने वाले इस कोलाहल की आवाज़ को, क्रोध की आवाज़ को वासना की आवाज़ को, लोभ, मोह, भय आदि की आवाज़ को रोकोगे नहीं तब तक अन्दर बैठे हुए प्रभु की आवाज़ सुनाई नहीं देगी। यह आवाज़ सुननी है तो उस खिड़की को बन्द कर दो जो संसार के बाज़ार की ओर खुलती है–

सुमरन सुरत लगाइके, मुख ते कुछ नहिं बोल।
बाहर के पट बन्द कर, अन्दर के पट खोल।।

तब आएगी आवाज़। प्रभु तो यहाँ बैठे हैं, बाजर जाने की आवश्यकता नहीं, ढूँढने की आवश्यकता नहीं–

दादू जिन कंकर पत्थर से विआ,
सो अपना मुल गँवाये।
अलख देव अन्दर बसे, बाहर काहे जाये।।
कई तो दौड़े द्वारिका, कोई काशी जाये।
कोई मथुरा को चले, साहब घट के माहिं।।

वह तो अन्दर बैठा है। जागो! उसकी आवाज़ सुनो–

ज्यो तिल माहीं तेल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रभु तुझमें बसे, जाग सके तो जाग।।

जागकर सुनो उसकी आवाज़, सुनाई देगी। उसका दर्शन भी होगा। तब माँग लेना जो माँगा है। सब–कुछ मिलेगा उस दरबार से–

ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्व विश्वा
जातानि परि ता बभूव।
तत्कामास्ते जुहस्तन्नोऽतु वयं स्याम पतयो
रयीणाम्।।

ओम् नाम का धन मिलेगा तब; ऐसा धन जो इस संसार में भी काम आता है, परलोक में भी; जिसके बाद कुछ माँगने की आवश्यकता नहीं रहती। शायद इसी दशा की ओर संकेत करके उदू के कए कवि ने कहा था–

देने वाले तुझो देना है तो इतना दे दे।
कि तुझे शिकवाये–कोताही–ए दामाँ हो जाये।।

परन्तु यह शिकायत की बात फिर सही। अब समय हो गया इसलिए ....ओ३म् तत्सत्!

शेष अगले अंक में....

वेदानुसार स्वर्ग

● महात्मा चैतन्यमुनि

व्याकरण शास्त्रानुसार 'स्वर्ग' शब्द 'स्वर्' उपपद में 'गम्लृ–गतौ' धातु से 'ड **प्रकरणेऽन्येष्वपि दृश्यते**। अ03–248 वार्तिकसूत्र से 'ड' प्रत्यय के योग से बनता है। गति के ज्ञान–गमन–प्राप्ति तीन अर्थ होते हैं। 'स्व' सुख का अनुभव होना, सुख में प्रविष्ट होना, सुख की प्राप्ति होना ही स्वर्ग अर्थात् सुख है। इसी प्रकार 'स्वर्गलोक' का अर्थ है। 'लोकृ दर्शने' धातु से लोक शब्द बनता है जिसका अर्थ 'स्थान' है। जहां स्वर्ग प्राप्त होता है–सुख प्राप्त होता है वह स्वर्गलोक है। स्थान से यहां किसी विशेष स्थान से नही है बल्कि जिस अवस्था में हमें सुख प्राप्त हो वही स्वर्ग है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के स्वमन्तव्यामन्तव्य–प्रकाश' में लिखते हैं– 'स्वर्ग'–नाम सुख–विशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है। 'नरक'–जो दुःख–विशेष भोग और सामग्री को प्राप्त होना है। 'सत्यार्थप्रकाश' के नौवें समुल्लास में वे मुक्ति के प्रसंग में स्वर्ग–नरक की व्याख्या करते हुए लिखते हैं–'मुक्ति में जीवात्मा निर्मल होने से पूर्ण ज्ञानी होकर उसकी सब सन्निहित पदार्थों का भान अर्थात् यथावत् होता है। यही सुखविशेष 'स्वर्ग' और विषयतृष्णा में फंसकर दुःखविशेष भोग करना 'नरक' कहाता है। 'स्वःसुख का नाम है, **'स्वः सुख गच्छति यस्मिन् स स्वर्गः, 'अतो विपरीती दुःखभोगो (यस्मिन् स) नरक इति'** जो सांसारिक सुख है वह 'सामान्य स्वर्ग' और जो परमेश्वर की प्राप्ति से आनन्द है, वही 'विशेष स्वर्ग' कहाता है। यहां पर महर्षि जी ने स्वर्ग को भी दो भागों में बांटकर बहुत ही सुन्दर एंव सार्थक विचार प्रस्तुत करके संसार को उपकृत किया है। लोक शब्द का अर्थ हैं 'जो देखा जाए, जो जाना जाए'। इसके भाव हम इस प्रकार से समझ सकते हैं –स्थान,अवस्था या काल,सुख–विशेष की अवस्था,प्रकाश की अवस्था आदि। लोक शब्द का व्यवहार बहुत से प्रसंगों में किया जाता है' जैसे –कन्या पितृलोक को छोड़कर पतिलोक को जा रही है आदि। जैसे स्वर्ग–लोक कोई स्थान विशेष नहीं है उसी प्रकार नरक भी कोई भी कोई स्थान विशेष नही हैं। स्वर्ग का अर्थ सुख है इसलिए नरक का अर्थ दुःख हुआ क्योंकि नरक शब्द स्वर्ग का विपरार्थक है। रामायण के सुप्रसिद्ध टीकाकार गोबिन्दराज ने नरक का अर्थ इस प्रकार किया है–**अत्र नरकः शब्देन दुःखं लक्ष्यते**–यहां नरक शब्द का अर्थ दुःख है। महर्षि यास्कजी ने निरूक्त में लिखा है–**नरकंन्यरकं नीचैर्गमनम् इति वा।** (1–3–11) अर्थात् दुःख अधःपतन या अवनति का नाम नरक है। नरक का सीधा सा अर्थ है–नीचे जाना,पतन का लोक, निरूक्त में भी कहा है–नीचे जाना, सुख का अभाव।

स्वर्ग तथा मुक्ति के लिए वेदों में अन्य शब्द भी आए–'**सुकृतस्य लोके'** (ऋ010–85–24) अर्थात् पुण्य कर्मों के लोक में। **'अमृतस्य लोक'** (ऋ010–85–24) अर्थात् अमर लोक में प्रविष्ट हों। निरूक्त में (2–14)भी स्वर्ग के पर्यायवाची नाम,द्यौ तथा सुकृतस्य –लोक दिए हैं। मीमांसा में (6–1–1) स्वर्ग सुख विशेष को माना गया है। स्वर्ग शब्द से स्थान–विशेष व वस्तु विशेष का ग्रहण मीमांसा को स्वीकार्य नहीं है। वेद के अनेक मन्त्रों में द्यौलाक, ब्रम्हलोक, स्वर्गलोक, मोक्ष तथा सुकृतलोक आदि की चर्चा की गई है ..... **बृहस्पतेरुत्तमं नाकं रूहेयम् इन्द्रस्योत्तमं नाकं रूहेयम्.** ....(यजु09–10) बृहस्पति और इन्द्र अर्थात् जो ज्ञानवान् व जितेन्द्रिय को विशेष स्वर्ग मिलता है वह मुझे प्राप्त हो। महर्षि दयानन्दजी ने **नाकः**(यजुः015–49) को मोक्ष–सुख लिखा है। असौ **स्वर्गाय लोकाय स्वाहा।**:(यजु035–22) यहां पर महर्षिजी ने स्वर्ग का अर्थ भी मोक्ष –सुख किया है। **स्वर्गलोकेः** (यजु023–20) **सुखमय लोक।** सुकृतस्य लोके। (यजु015–50) पुण्य कर्मो से अर्जित लोक। येन स्वः स्तभितं येन नाकः(032–6)यहां पर स्वः का अर्थ सुख तथा नाकः का अर्थ सब दुःखों से रहित मोक्ष किया है। महर्षिजी ने बहुत से स्थानों पर अमृतम् का अर्थ भी (यजु032–10,25–13) मोक्ष–सुख किया है। अमरकोश के अनुसार–**स्वरव्ययं स्वर्गनाकत्रिदसानयाः। सुरलोको द्यौर्दिवो द्वेस्त्रियां त्रिविष्टपम्।।** (16) अर्थात् स्वःअव्यय,स्वर्ग,नाक,त्रिदिव,त्रिदशालय, सुरलोक ,द्यौ,दिवः और त्रिविष्टप आदि शब्द एक ही पदार्थ के वाचक है। स्वर्ग किसे प्राप्त होता है इस सम्बन्ध में ऋग्वेद में आया है– **अविन्दद् दिवो.......इन्द्रः परीवृता द्वार इषः परीवृताः।।** (ऋ01:130:3) ज्ञानी पुरुष शरीरस्थ प्रभु का दर्शन करता है, जितेन्द्रिय बनकर वह प्रभु–प्रेरणा को सुनता है और स्वर्गद्वारों को खोलने वाला होता है। **एकस्मै स्वाहा द्वाभ्यांस्वाहा शताय स्वाहैकशताय स्वाहा व्युष्टयै स्वाहा स्वर्गाय स्वाहा।।** यजु(022–34) एक परमेश्वर की प्राप्ति के लिए स्तुति,प्रार्थना,उपासना और पुरुषार्थ करो। मन और जीवात्मा दोनों की शुद्धि के लिए स्तुति, प्रार्थना, उपासना और पुरुषार्थ करो। शतवर्ष की आयु प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ करो। एक सौ एक प्रणव –जप और गायत्री –जप के लिए तत्पर हो। अन्धकार दूर करके प्रकाश की प्राप्ति के लिए प्रयास करो। स्वर्गप्राप्ति के लिए प्रयास करो। **युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवोस्वर्ग्याय शक्त्या।।** (यजु011–2) योगाभ्यास से मन को स्थिर करने का प्रयास करें, प्रभु से आदिष्ट कर्मो में उसे यथाशक्ति लगाए रक्खें, यही स्वर्ग का मार्ग है। वेद में स्वर्ग की कामना वाले से लिए यज्ञ का अनुष्ठान् करने के लिए कहा गया है–**स्वर्गकामो यजेत्** यजुर्वेद के अनेक मन्त्रों में यज्ञ के लाभ बताए गए हैं। एक मन्त्र में कहा गया है–**स्वाहा यज्ञं मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात्।**

स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याम् स्वाहा वातादारभे स्वाहा।। (यजु04–6) हमारे मनों को, इस विशाल अन्तरिक्ष को, द्युलोक से लेकर पृथिवी तक रहने वाले सभी प्राणियों को व वायु को शुद्ध करने वाला यह यज्ञ ही श्रेष्ठतम कर्म है। हम अपने गृहस्थ को कैसे स्वर्ग बनाएं इस सम्बन्ध में वेद कहता है (युज.1–22) गृहस्थ को सन्तान निर्माण का आश्रम समझा जाए, सन्तानों को उस परमात्मा की धरोहर समझें, सन्तानों में शक्ति और शान्ति के विकास का प्रयत्न करें, घर में अन्न की कमी न होने दे, अपनी शक्तियों को क्षीण न होने दें, शरीर–मन व मस्तिष्क इन तीनों का ठीक–ठीक विकास करें, अपने हृदय को विशाल बनाएं, यज्ञो को हम शक्ति–विस्तार का साधन समझें, प्रभु सम्पर्क से हम कभी अलग न हों और प्रभु कृपा से हमारा ठीक परिपाक हो। यजुर्वेद (15–10से14) के मन्त्रों के अन्तिम वाक्य में कहा गया है '**नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु।।** यहां पर यजमान के लिए प्रार्थना की गई है कि उसे (**नाकः**) जहां दुःख है ही नहीं वहां तथा (**स्वर्ग लोके**) उत्तम कर्मों से अर्जनीय लोक में (**सादयन्तु**) स्थापित करें। इन्हीं मन्त्रों में यह भी बताया गया है कि वह यजमान इन स्थितियों को प्राप्त करने के लिए क्या क्या करे। पत्नी ज्ञान–दीप्त, निरन्तर उन्नति–पथ पर बढने वाली हो, धर्मार्थ व काम का समानुपात में सेवन करती हो। घृतादि के प्रयोग से शरीर को स्वस्थ रखे। शरीररूप रथ से जीवन–यात्रा को पूर्ण करने का निश्चय करे। उसका जीवन व्यवस्थत हो, गृह कार्यों में निपुण हो, प्राण–शक्ति सम्पन्न हो। उसके प्राण, ज्ञानेद्रियां व कर्मेन्द्रियां स्वस्थ हो, उत्तम वस्तुओं का वह प्रशंसनीय प्रयोग करने वाली हो। 'वृद्धि' को जीवन का सूत्र बनाकर चले। वह उत्तमता से शासन करने वाली हो,वह मितभाषी हो तथा अच्छाइयों को ग्रहण करने

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

☞ पृष्ठ 03 का शेष

वेदानुसार स्वर्ग

वाले स्वभाव का हो, विशाल ह्रदय वाली है। वह अपने शरीर मन और बुद्धि तीनों को नवीन व परिपुष्ट बनाए रखे। पति सदा अग्नि अर्थात् अग्रणी हो, ऐश्वर्यशाली हो। वह सब प्रकार के द्वेषादि का निवारण करने वाला हो तथा स्वयं सौम्य और शान्त स्वभाव वाला हो। वह ऊंचे से ऊंचा ज्ञानी बनने वाला हो। **तऽउभौ चतुरः पद:सम्प्रसारयाव स्र्वगे लोके प्रोर्णुवाथां। वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु।।**:(यजु023–20) सब पर सुखों की वर्षा करने वाले,शक्तिशाली तथा सर्व–सामर्थ्यवान् परमात्मा की कृपा से हम धर्म,अर्थ काम और मोक्ष इन चारो पुरुषार्थों को सिद्ध करके अपने को स्वर्गलोक में स्थापित करें।

अस्मात्वमधि जातोऽसि त्यदयं पुनः।
असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा।।
(युज035–22)

हे मनुष्यो! तुम लोगों को चाहिए कि इस जगत में मनुष्यों का शरीर धारण कर विद्या, उत्तम शिक्षा,अच्छा स्वभाव, धर्म योगाभ्यास और विज्ञान का सम्यक् ग्रहण करके मुक्ति सुख के लिए प्रयत्न करो और यही मनुष्य–जन्म की सफलता है ऐसा जानो। **त्रीन्त्समुद्रान्त्समसृपत् स्वर्गानपां पतिर्वृषभऽइष्टकानाम्। पुरीष वसानः सुकृतस्य लोके तत्र गच्छ यत्र पूर्वे परेताः।।** (यजु013–31) मनुष्य तीनों कालों में भूत,वर्त्तमान व भविष्यत् में अथवा बाल्य, यौवन व वार्धक्य में सदा कार्यों में लगा रहे, तभी इसके तीनों काल स्वर्ग बनते है। यज्ञशाल पति घर में पत्नियों के जीवन को सुखी बनाता है। यह पालनात्मक कर्मों को करने वाला व्यक्ति सदा पुण्यकृत् लोगों के लोकों को प्राप्त करता है। **अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धाइव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः।।** (सा0233) हे परमात्मा! हम यवनावस्था से ही आपकी भरपूर स्तुति करें। हे चराचर के स्वामी हम आपका ध्यान करें जिससे हमारा दासत्व भाव दूर हो सके तथा ईर्ष्या–द्वेष आदि से ऊपर उठकर स्वर्ग का दर्शन कर सकें।। अथर्ववेद में स्वर्ग प्राप्ति के साधन इस प्रकार बताए हैं **ऊ इदं मे ज्योतिरमृतं हिरण्यं पक्वं क्षेत्रात्कामदुघा म एषा। इदं धनं नि दधे ब्राम्हणेषु कृण्वे पन्थां पितृषु यः स्वर्गः।।** (अथर्व011–1–28)हम ज्ञान का संचय करें, निरोग बनें, वीर्य रक्षण करने वाले हों, वानस्पतिक भोजन करें ,घर में कामदुघा धेनु रखें, ज्ञानियों को लोकहित के कार्यों के लिए धन दें और पालनात्मक प्रवृत्ति वाले बनें

अथर्ववेद के 12वें काण्ड के तीसरा सूक्त का देवता 'स्वर्ग' है। इसमें गृहस्थ को स्वर्ग बनाने के लिए बहुत सी महत्वपूर्ण बातें कही गई हैं–पुरुष शक्तिशाली हो, उसे अनुकूल जीवन साथी मिले, गृहस्थ में संयम व व्यवस्था में चलें जिससे ज्ञान, वीर्य और तेज में वृद्धि हो। केवल सन्तानोत्पत्ति हेतु ही पति–पत्नी संसर्ग करें। पति पत्नी दोनो मिलकर कार्य करें। गर्भ में ही सन्तान को अच्छे संस्कार दें ताकि सन्तान का निर्माण ठीक प्रकार से हो सके। सात्विक भोजन करके नीरागता को प्राप्त करें। हमारे घरों में यज्ञशीलता बनी रहे। श्रतद्धापूर्वक आगे बढ़ने की दिशा में चलें यज्ञशेष को ही खाने वाले बनें तथा प्रभु की उपासना करें, अपने ऐश्वर्य का धर्मकार्यो के लिए ही प्रयोग करें। उत्तम प्रजा को पैदा करके हम देश को उन्नत करें? ध्रुवता धारण करें, तपस्वी व सत्यवादी बनें, रोग न हो इस प्रकार की व्यवस्था करें। उत्तम सन्तान प्राप्त करने के लिए पति–पत्नी उपासना करें, ज्ञानवान् बनें तथा संयमी बनें। धन–सम्पन्न बनें, प्रभु–भक्त बनें, दिव्य गुण अपनाएं, पति पत्नी तथा परिवार में प्रेम–व्यवहार हो। कभी भी एक दूसरे पर क्रोध न करें, ऋतु–अनुकूल भोजन करें, देव–वृत्ति के बनें तथा यज्ञशील बनें। पति–पत्नी एक दूसरे से छिपकर कुछ न ग्रहण करें, मधुर वचन बोलें, सदा सुकृत ही करें हमारे जीवन में पाप और पतन न हो। द्वैष–भाव न रखें, सदा सात्त्विक वृत्ति बनाए रखें, प्रत्याहार का स्वभाव बनाएं.... आगे कहा है– (अथर्व03–28–5, 6–120–3) जब बुद्धि मन का शासन करने वाली होती है तब–लोगों के ह्रदय उत्तम होते हैं, उनके कर्म उत्तम होते हैं, शरीर नीरोग होते हैं, पुरुषों के प्रति इनका व्यवहार मधुर होता हैं, मांसाहार के प्रति अरुचि के कारण यह पशुओं का संहार नही करती। इस प्रकार यामिनी बुद्धि घर को स्वर्ग तुल्य स्वर्ग बना देती है। स्वर्ग तुल्य गृह वह है जहां –सबके ह्रदय पवित्र हैं, सब यज्ञादि कर्मों को करने वाले हैं, सबसे शरीर नीरोग हैं, अंग अविकृत हैं, स्वभाव सरल व अकुटिल है, माता–पिता का आदर हैं और सन्तानों का शिक्षण–दीक्षण ठीक है।

अथर्ववेद के चौथे काण्ड के चौंतीसवें सूक्त में ब्रम्हौदन के स्वरूप की चर्चा करने के बाद इस ज्ञान–भोजन द्वारा स्वर्ग–लोक की कामना की गई है (अथर्व04–34–5से7) हम ज्ञानभोजन करने वाले बनें। इस ज्ञान–ग्रहणरूप तप से ही उस यज्ञ की भावना का हममें उदय होता है जो हमारी सब शक्तियों का विस्तार करती है। ज्ञान–भोजन करने वाले लोग भौतिक सुखों से ऊपर उठकर प्राणसाधना करते हुए पवित्र व दीप्त जीवन बिताते हैं। ये लोग कामाग्नि से सन्तप्त नही होते। इनका घर स्वर्ग–लोक सा बन जाता है। ज्ञानप्रधान जीवन वाला व्यक्ति दरिद्र नहीं होता, वह प्रभु का उपासक होता है, दैवी–सम्पत्ति को प्राप्त करता है तथा विनीत ज्ञानियों के सम्पर्क में हर्ष का अनुभव करता है। ब्रम्हौदन का सेवन करने वाला ज्ञानप्रधान व्यक्ति सदा शक्तिशाली बना रहता है, उत्तम शरीर रथ वाला होता हुआ कभी मार्ग–भ्रष्ट नहीं होता तथा उत्तम बातों का परिग्रह करता हुआ द्युलोक से भी ऊपर उठकर ब्रम्हलोक को प्राप्त करता है। ज्ञानयज्ञ हमें लक्ष्य–प्राप्ति में सर्वाधिक सहायक है। यह शक्तिप्रसारक यज्ञ हमें स्वर्ग में ले जाता है। इस यज्ञ के लिए वातावरण को उपयुक्त बनाने के लिए हम घरों में छोटी–छोटी पुष्करणियों का आयोजन करें। उनमें खिले कमल गृह को लक्ष्मी सम्पन्न बनाएंगे। इनका केसर नीरोगता का कारण बनता हुआ आनन्द का संचार करेगा। हमारे घरों में 'घृत, मधु, पवित्र जल दूध व दही' की कभी कमी न हो। घर में चारों ओर कमलों के छोटे–छोटे तालाब हों। घर में दूध, उदक व दधि से पूर्ण घड़े मंगल के प्रतीक हैं। ये घर में माधुर्य का सचेन करने वाले हैं।

(अथर्व0 18–4–1 से 7,10,11,13,14) हम रक्षणात्मक कर्मों में प्रवृत्त हुए–हुए वेदवाणी के स्वाध्याय से प्रभु के प्रकाश को देखने का प्रयत्न करें । प्रभुप्रेरणा को प्राप्त करने वाला व्यक्ति यज्ञशील बनता है। यह सदा पुण्यकर्मा लोगों के लोक में निवास करने वाला होता है। देव यज्ञमय जीवन वाले होते हुए घरों को स्वर्गमय बनाते हैं। हम ऋत के मार्ग को देखें। इसी मार्ग से पुण्यशील लोग चलते हैं। इस मार्ग में गुणों के आदान करने वाले आदित्य मधु का भक्षण करते हैं। यही तृतीय नाक लोक है। हमें इसी का आश्रय करना चाहिए। हम पूर्ण–स्वस्थ, पुण्यकर्मा गुणों व ज्ञानों का आदान करने वाले बनकर प्रभु का उपासन करते हुए अपने घरों को स्वर्ग बनाएं। ये घर नीरोगता के आधार हों। हमारे लिए अन्न–रस का दोहन करने वाले हों। 'यज्ञ' त्रिलोकी का धारण करता है। यज्ञों के होने पर सब अन्तरिक्ष व द्युलोक इस पृथिवी को दीप्तिमय स्वर्गतुल्य बनाते हैं। यज्ञशील पुरुष के लिए सब काम्य पदार्थों को आप्त कराते हैं '**एष वोऽस्त्विष्टकामधुक्**'। यज्ञ हमारे जीवन को स्वर्गमय बनाए। यज्ञशील पुरुष के लिए सब दिशाएं इष्ट काम्य पदार्थो को प्राप्त कराएं। सब इष्टों से परिपूर्ण होता हुआ भी यह यजमान अभिमान व क्रोध से शून्य होता है। हम माता, पिता, आचार्य आदि तीर्थों से अज्ञान को तैर कर यज्ञशील बनें। इस यज्ञशीलता से हमारे लिए सब ओर प्रकाश ही प्रकाश होता है। इस यज्ञशीलता से हम मेल वाले बनकर शक्तिशाली बनते हैं आचार्य पिता व माता रूप अग्नियां यज्ञशील पुरुष को स्वर्ग प्राप्त कराते हैं। यहां यज्ञशील पुरुष देवों के साथ ज्ञानचर्चाओं में आनन्द अनुभव करते हैं । प्रभु हमें सब ओर से शान्त व दीप्त जीवन वाला बनाएं। हमारे जीवनों में प्रभु ही आचार्य पिता व माता के रूप में स्थापित होते हैं। प्रभु की आज्ञा के अनुसार यज्ञ करने पर हमें प्रभु की प्राप्ति होती है। हम प्रभु के आदेश के ही प्राजापत्य यज्ञ करने वाले हों। यज्ञाग्नि में अपने को परिपक्व करके हम विषय–वासनाओं से दूर रहें। हम सकाम यज्ञों से स्वर्ग को प्राप्त करके उन्हें निष्कामता से करते हुए प्रभु को प्राप्त करने वाले हों, यही देवयान मार्ग है। (अथर्व09–5–8,9,16,18) हम पांचों ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञानप्राप्ति के कार्य मे लगे रहें। यज्ञशील व पुण्यकर्मा बनकर ब्रम्हलोक में विचरण करने वाले बनें। हम गति द्वारा बुराईयों को दूर करनेवाले बनकर पुण्यकर्मा लोगों के लोक में आरूण हो। प्रार्थनामय जीवन वाले बनकर शरभ के समान शुत्रओं को शीर्ण करते हुए दुर्गों को लांघ जाएं। ज्ञान प्राप्ति में लगकर अपने को प्रभु के प्रति अर्पित करें। इसी अर्पण करने वाले को प्रभु आनन्दविभोर कर देते हैं। हम इस जीवन मे पांचों ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान प्राप्ति में प्रवृत्त हों । जीव 'अज' है, 'स्वर्ग' है। उसे गतिशील बनकर बुराई को अपने से परे फेंक कर प्रकाश प्राप्त करना है । उसके साथ ज्ञानचर्चा करते हुए अन्य लोग भी प्रभु को जान पाएं। इस 'अज' की एक ही कामना है कि 'मैं उस प्रकाशमय पवित्र प्रभु को प्राप्त कर पाऊँ। इस प्रकार अपने को ज्ञानाग्नि में परिपक्व करें । गतिशीलता द्वारा बुराइयों को परे फेंकने वाले बनें। पतन के मार्ग को अपने से दूर रखें। इससे हमारा जीवन स्वर्गोपम बनेगा और हम ब्रम्हलोक को प्राप्त करने वाले बनेंगे।

–महादेव, सुन्दरनगर–174401, हि.प्र.

दयानन्द भवन में होगी प्रवचन श्रृंखला

एक विज्ञप्ति के अनुसार आर्य केन्द्रीय सभा, दयान्नद भवन, डॉ बराट रोड़ स्वामी दयानन्द सरवती वार्ड (नेपियर टाउन) जबलपुर के तत्वावधान में वेद विज्ञान प्रवक्ता, विचारक व स्वनामधन्य आचार्य डॉ. वागीश जी शर्मा (यज्ञतीर्थ एटा उ.प्र.) के पावन सान्निध्य में 51 कुण्डीय सर्वकल्याण महायज्ञ एवं त्रिदिवसीय प्रवचन श्रृंखला के उपलक्ष्य में दिनांक 20,21 एवं 22 नवम्बर 2015 को जबलपुर के आदर्श नगर क्षेत्र के बड़े मैदान में विशाल आयोजन किया जा रहा है।

सभी अतिथियों के आवास एवं भोजन आदि की समस्त व्यवस्था सभा द्वारा की जायेगी। अपने आने की सूचना 09893974426 पर दी जा सकती है जिससे व्यवस्था में सहयोग मिलेगा।

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– आदिकाल से सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय होता चला आ रहा है, तो इससे यह मान सकते हैं कि उत्पत्ति व प्रलय का जो क्रम है, कभी उसकी शुरूआत हुई होगी, और इसका अन्त भी आएगा, क्योंकि हर कार्य की शुरूआत और अन्त होता है?

समाधन– वर्तमान सृष्टि उत्पन्न हुई, वर्तमान सृष्टि का अन्त पहले होगा। इससे पहले एक सृष्टि थी, जितना पीछे–पीछे चलते जाएँगे, पीछे–पीछे, उतनी सृष्टियाँ पाते जाएँगे। सृष्टि और प्रलय का यह जो क्रम है, इसका कोई प्रारंभ नहीं है। 'पहली सृष्टि' नाम की कोई चीज नहीं थी। जब भगवान ने 'पहली बार' सृष्टि बनाई हो, ऐसी कोई सृष्टि नहीं है। यह अनादिकाल से सृष्टि बन रही है, इस बार भी बनी है। 'प्रथम सृष्टि' कोई नहीं है। यह बात बुद्धि में बड़ी मुश्किल से बैठती है, कम बैठती है। अच्छा एक सिरे की बात समझ में नहीं आई दूसरे सिरे की बात करेंगे, तो शायद समझ में आ जाए। वर्तमान में तो यह सृष्टि चल रही है, इसका विनाश हो जाएगा, यानि प्रलय हो जाएगा। उस प्रलय के बाद फिर यह सृष्टि बनेगी। और फिर अगली दूसरी सृष्टि का प्रलय होगा। फिर तीसरी बनेगी, उसका प्रलय होगा। इस प्रकार भविष्य में यह बनने–बिगड़ने का क्रम समाप्त हो जाएगा? नहीं होगा। भविष्य में कभी इसका अन्त नहीं होगा। बनती रहेगी, बिगड़ती रहेगी। इसका क्रम कभी समाप्त नहीं होगा। अब नियम क्या कहता है, 'जिस वस्तु का आरम्भ होता है, उस वस्तु का अन्त होता है।' अब इस बात को उलटकर बोलिए। 'जिसका आरभ नहीं होता, उसका अंत भी नहीं होता।' इस आधार पर आपने स्वीकार किया, कि सृष्टि–प्रलय का भविष्य में अन्त नहीं होगा। इस तरह दूसरी बात अपने आप सिद्ध हो गई, 'जब अन्त नहीं हैं, तो आरंभ भी नहीं है।' अगर भविष्य में इस सृष्टि–प्रलय का क्रम कभी समाप्त नहीं होगा, तो भूतकाल में भी इसका आरंभ नहीं हुआ होगा। इसलिए बनने–बिगड़ने का क्रम न कभी आरम्भ हुआ, और न कभी समाप्त होगा। थोड़ा गहराई से बैठकर मनन करेंगे, तो अच्छी स्पष्ट हो जाएगा।

शंका– सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व–हितकारी नियम पालन में स्वतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें। इस नियम का क्या अर्थ है?

समाधान–देखिए, हमारे जीवन जीने के दो भाग हैं। एक हमारा व्यक्तिगत क्षेत्र है, और दूसरा सामाजिक क्षेत्र है। व्यक्तिगत क्षेत्र में हम स्वतंत्र हैं, जबकि सामाजिक क्षेत्र में हम परतंत्र हैं। दसवें नियम में यही बात कही गई है। जैसे भोजन की घंटी बजी तो भोजन में सबको एक साथ पहुँचना नियम है। यह नहीं कि घंटी बजी, और पाँच आदमी चले गए, पाँच आदमी दस मिनट के बाद गए, पच्चीस आदमी बीस मिनट के बाद गए। इससे तो सारी व्यवस्था बिगड़ जाएगी। इस तरह सामाजिक नियम में हम परतंत्र हैं।

अब कितनी रोटी खाएँगे? इसमें हम स्वतंत्र हैं। एक आदमी छह रोटी खाए, तो दूसरा भी छह रोटी खाए, यह जरूरी नहीं। इतना हम स्वतंत्र हैं। किसी की भूख ज्यादा है, तो वो छह खाए। किसी की भूख कम है, वो चार खाए। किसी की और कम है, तो वो तीन खाए। कोई केवल खिचड़ी खाए, रोटी न खाए। कोई कुछ भी खाए, यह व्यक्तिगत नियम है। व्यक्तिगत जीवन में हम स्वतंत्र हैं। जैसे समय पर आने का नियम है, तो कक्षा में घंटी बजते ही समय पर आओ। सामाजिक नियम में हम सब परतंत्र है। घर से आप शिविर में आएँ, उसमें आप स्वतंत्र हैं। यह आपका व्यक्तिगत नियम था आने के लिए। आए तो इस नियम से परतंत्र हो गए। शिविर में आ गए, तो अब यहाँ के नियम का पालन करना ही पड़ेगा। इसी प्रकार से सब जगह आप समझ लेंगे।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

"पाप और पुण्य से जन्म और मृत्यु का कोई सम्बन्ध नहीं है"

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

कुकर्म पाप है और सुकर्म पुण्य है। मनुष्य हिंसक हो अथवा अहिंसक, इन दोनों की आयु निश्चित रहती है, (फिर भी 'शरदः शतं जीवेम' के लिये ईश्वर से प्रार्थना की जाती है) परन्तु किसी की स्वाभाविक मृत्यु होती है और किसी की दुर्घटना आदि से अस्वभाविक अकाल मृत्यु हो जाती है। जिनकी अकाल मृत्यु हो जाती है, वे शेष आयु को भोगने के लिये अर्थात प्राप्त करने के लिये पुनः उनको जन्म लेना पड़ता है। उदाहरण के लिये कोई जन्म लेते ही, कोई 2 वर्ष में, कोई 5 वर्ष में, कोई 10 वर्ष में मर जाते हैं। इसका मूल कारण पूर्व का शेष आयु भोग ही का परिणाम है। यह जन्म–मरण और आयु पूर्व संस्कार के अनुसार ही प्राप्त होता है।

आत्मा के संयोग से जन्म और मृत्यु शरीर का होता है, आत्मा का नहीं, वह अमर है। जैसे पापी का पुनर्जन्म होता है वैसे ही पुण्यात्मा का भी होता है। यह जन्म–मृत्यु का क्रम सूर्योदय और सूर्यास्त तथा जागृत और सुषुप्ति के समान सृष्टि के प्रारम्भ काल से चला आ रहा है। जीवात्मा परिच्छिन्न है अर्थात यह आत्मा कोई मिश्रित पदार्थ नहीं, अमिश्रित द्रव्य है, और यह वह अणु–कण है जिसमें जानने, क्रिया करने और भोग करने का गुण विद्यमान रहता है। यह आत्मा, परमात्मा से स्थूल और परमाणु कणों से अत्यन्त सूक्ष्म होता है। जब रज–वीर्य जैसे शरीर बनाने वाले प्राण से उसका सम्बन्ध हो जाता है, तब आत्मा के संयोग से स्थूल शरीर का माता के रस–रक्त से निर्माण होने लगता है। जीवात्मा प्राणतत्व में प्रकाश कण जैसा अनगिनत हैं।

लाखों–करोड़ों वर्षों में वनस्पतियों और प्राणियों का कितनी बार सुनामी, भूकंप और ज्वालामुखी आदि के द्वारा सब उथल–पुथल होने के पश्चात अनेक प्रकार के पत्थरों के पहाड़ और नदी–नदियों का निर्माण हो गया। इसके चलते पुनः वनस्पतियों और विभिन्न प्रकार के प्राणियों की उत्पत्ति अर्थात् वंश वृद्धि होने लगी। तात्पर्य यह है कि– दरजी कपड़े का काट–छांट तब तक करता है जब तक कुर्ता तैयार नहीं हो जाता। इसी प्रकार पंचतत्वों का भी हाल था, लाखों वर्ष पूर्व भूगर्भ में भूकंप आदि के द्वारा अनेक प्रकार के रासायनिक परिवर्त्तन हुआ। तभी तो कोयला, तेल, गैस, रत्न, लोहा, सोना आदि धातुओं का निर्माण हो गया। अतः ईश्वर ने अपनी विभिन्न प्रकार की शक्तियों से अनेक प्रकार के उपादानों को प्रस्तुत करने में कोई कमी नहीं रखी। (यूरेनियम की मात्रा कम दी) जब छोटे प्राणियों से लेकर सारे पशु–पक्षी उत्पन्न हो गये, तब अंत में एक विशेष जाति के प्राणी उत्पन्न हो गये और वे ही रूपान्तर होकर हजारों की संख्या में (तिब्बत के आसपास) स्त्री और पुरुष के रूप में प्रकट हो गये। उसके पश्चात उनमें जिनकी बुद्धि तीव्र थी उन आदिम ऋषियों (अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा) ने ईश्वरीय–ऋक्, यजु, साम और अथर्व वेदों के ज्ञान से जो जो उनके समीप थे उन्हें नैमित्तिक ज्ञान प्राप्त कराने लगे और तभी से वंश वृद्धि तथा माता, पिता, आचार्य एवं भाई–बहन का ज्ञान सबको होने लगा।

जीवन उपयोगी पंचतत्व की रचना हो जाने के बाद भी कभी–कभी कतिपय प्राणियों का ह्रास और विकास होता रहता है। ईश्वरीय नियम में एक विशेषता यही है कि सम्पूर्ण संसार का नाश नहीं होता। क्योंकि ईश्वर ने पंचतत्व में रक्षा के साधन अधिक दे रखे हैं। तभी तो सारा संसार कायम है। सृष्टि में प्राण एवं आत्माओं की कोई कमी नहीं है। इसलिये वंशवृद्धि के कारण जनसंख्या में वृद्धि का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं हैं। जिन के सुख–दुःख रूपी कर्म भोग के संस्कार बाकी हैं, उन्हें जन्म लेकर शरीर से सुख–दुःख तो भोगना ही पड़ेगा।

जन्म और मृत्यु ये दोनों ईश्वरीय नियम हैं। मानव को दुःख तीन प्रकार से होता है– आध्यात्मिक अर्थात मन और शरीर सम्बन्धी पीड़ा। आधिभौतिक– जो दूसरे प्राणियों से दुखित होना और आधिदैविक जो अतिवृष्टि, अतिताप, अतिशीत से इन्द्रियों को कष्ट प्राप्त है। अतिवृष्टि से जो उत्तराखण्ड में जल प्रलय व सुनामी जैसे आपदायें हुई और जम्मू–कश्मीर में जो जल प्लावन प्रलय का भयंकर दृश्य हुआ, इन विपदाओं से हजारों–लाखों स्त्री–पुरुष–बच्चे मृत्यु को प्राप्त हो गये। उनके घर मकान नष्ट हो गये।

अब प्रश्न होता है कि यह किन कर्मों का फल था, जो अतिवृष्टि के कारण ऐसी दुर्घटनायें घटीं? देखिये विज्ञान के आविष्कार से एक तरफ जैसे सबको आशीर्वाद प्राप्त हो रहा है वैसे ही दूसरी तरफ से उससे

शेष पृष्ठ 09 पर

वैदिक देवताओं के नाम से बहुदेवतावाद को प्रश्रय ?

● भावेश मेरजा

परोपकारी पाक्षिक के अक्टूबर (प्रथम) 2014 के अंक में जयपुर निवासी श्री देवर्षि कलानाथ शास्त्री जी का **'वैदिक देवता पृथ्वी : मूर्तिपूजा की परिणति'** लेख प्रकाशित हुआ है। पत्रिका के सम्पादक महोदय ने लेखक को भाषा शास्त्री, संस्कृत तथा हिन्दी भाषा के अधिकारी विद्वान एवं इतिहास तथा संस्कृति के मर्मज्ञ विद्वान् लिखा है।

लेख के आरम्भ में लेखक है– "यह एक सुविदित तथ्य है कि भक्ति आन्दोलन के प्रभाव से पूर्व जिन वेदकालीन देवताओं की आराधना देश में की जाती थी, वे यथापि आज भी प्रत्येक धार्मिक कृत्य के अवसर पर पूजे जाते हैं जैसे–इन्द्र, वरुण, प्रजापति, अग्नि, सूर्य आदि, किन्तु भक्ति आन्दोलन ने जिन कृष्ण, राधा, राम, सीता आदि को जन–जन के हृदय में आसीन कर दिया, वे वेदकाल के देवता नहीं थे। अन्य कुछ ऐसे देवताओं की आराधना भी अत्यन्त लोकप्रिय हो गई जो वेदकाल में ज्ञात नहीं थे, जैसे हनुमान, भैरव आदि।"

लेखक ने इन्द्र, वरुण, प्रजापति, अग्नि, सूर्य आदि को 'वेदकालीन देवता' कहा है। यह तो सत्य है कि वेदों में इन नाम वाले 'देवता' (अर्थात् प्रतिपाद्य विषय) मान्य हैं, परन्तु वेदों के शब्द यौगिक (प्रातिप्रदिक वा धातुज) व योगरूढ़ि होने से (एवं रूढ़ि न होने से) वेदभाष्यकारों द्वारा प्रकरणानुसार इन देवताओं के विभिन्न अर्थ किए जाते हैं। वेदों में इन्द्र, वरुण, प्रजापति, अग्नि, सूर्य आदि देवता वाचक नामों को विभिन्न अर्थों में, चेतन एवं जड़ पदार्थों के रूप में भी ग्रहण किया जाता है। महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में ऐसे कई नामों के व्युत्पत्ति पूर्वक–धात्वर्थ के आधार पर परमात्मा परक अर्थ प्रकाशित किए हैं। इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने अपने ग्रन्थों में यह सिद्धान्त भी प्रमाण पुरस्सर प्रतिपादित किया है कि वेदों में ये और ऐसे अन्य कई नाम एक ही सत्ता के, एक ही देवता के, एक ही ईश्वर के विभिन्न गुण–कर्म–स्वभाव के द्योतक हैं। इस प्रकार से वेदों में एक ही ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना पाई जाती है।

विवेच्य लेख में लेखक ने 'आराधना' शब्द का प्रयोग किया है, जिसका प्रचलित अर्थ पूजा, उपासना, सेवा, नमन आदि लिया जा सकता है। परन्तु आज हमारे समाज में इन इन्द्र, वरुणादि देवताओं को प्रायः विभिन्न देवों के रूप में – किसी गुण, ऐश्वर्य आदि के अधिष्ठात्रा देवों या अधिष्ठात्री देवियों के रूप में–ही ग्रहण किया जाता है। फिर इसी पौराणिक–अवैदिक मान्यता के आधार पर उनकी विभिन्न कल्पित मूर्तियों को माध्यम बनाकर उनकी पूजा–अर्चना व आराधना की जाती है। इस प्रकार के व्यवहार में वस्तुतः वैदिक एकेश्वरवाद का तो स्पष्टतः निरादर ही होता है।

लेखक ने अपने लेख में कृष्ण, राधा, सीता, हनुमान, भैरव आदि देवताओं की आराधना को
वेदकाल बाह्य बताया है। उनका यह मत निःसन्देह स्तुत्य है।

लेखक ने अपने लेख में लक्ष्मी को वेदकालीन देवता माना है। उन्होंने लक्ष्मी को विष्णु की अर्धांगिनी और नारायण की पत्नी बताते हुए आगे लिखा है कि – वेदकालीन ऋषि लक्ष्मी को धन की देवी मात्र नहीं मानता था, विष्णु विश्व के प्रतिपालक हैं। वे त्रिविक्रम हैं, विश्वरूप हैं। वेद उन्हें सूर्यमण्डल में देखकर में प्रणत होता है। वे आकाश का रंग धारण किए हुए हैं, गगन–सदृश हैं, मेघवर्ण हैं– इत्यादि। परन्तु प्रतीत होता है कि लेखक अपनी बात को यहां ठीक से स्पष्ट नहीं कर पाए हैं।

वैदिक भाषा में 'विष्णु' और 'नारायण' दोनों परमात्मा के भी नाम हैं, मगर जिस परमात्मा के ये नाम हैं, वह परमात्मा **अकायम्, निराकार व चेतन सत्ता** हैं। अतः उस परमात्मा की, जो देहधारी मनुष्य नहीं है, अर्धांगिनी या पत्नी होने का तो कोई प्रश्न ही नहीं है। वेदोक्त ईश्वर आकाशवत् अनन्त व्यापक तो है, परन्तु उसका कोई वर्ण नहीं है। उसकी सर्वज्ञता को, ज्ञान–स्वरूप को, शुद्ध स्वरूप को प्रकट करने के लिए ही वेद में उसे **'आदित्यवर्णम्'** कहा गया है। स्वभावतः तो वह अरूप– अवर्ण ही है। रूप या वर्ण प्राकृतिक पदार्थ का गुण है, चेतन का नहीं। अतः किसी मेघवर्ण प्राकृतिक पदार्थ को ईश्वर मानकर पूजना अविद्या या मिथ्या ज्ञान ही है। सर्वव्यापक ईश्वर का एक नाम 'विष्णु' भी है, क्योंकि वह चर और अचररूप जगत् में व्यापक है– **'वेवेष्टि व्याप्नोति चराऽचरं जगत् स विष्णुः'।** यही विष्णु विश्व का परम प्रतिपालक है। मगर उससे पृथक् कोई अन्य देहधारी विष्णु विश्व का परम प्रतिपालक कभी नहीं हो सकता–सर्वव्यापक, सर्वज्ञ न होने से। हां, यह भिन्न बात है कि वेदों में परमात्मा से भिन्न पदार्थों के लिए भी इन विष्णु, नारायणादि शब्दों का धात्वर्थ के आधार पर प्रयोग अवश्य हुआ है।

आगे चलकर लेखक ने लक्ष्मी को पृथ्वी का पर्याय मानकर उसको सूर्य की सेविका बताया है और अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त का नाम लेकर पृथ्वी के गुणों का वर्णन किया है। साथ में लेखक ने गंगा नदी का भी स्तवन किया है। लेखक का मत है कि–"आज हम पृथ्वी की पूजा जिस रूप में कर रहे हैं, उसे सगुण भक्ति और मूर्तिपूजा की परम्परा ही से समझा जा सकता है। "लेखक ने आगे लिखा है कि–"हम देवनदी गंगा के ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकते, उसे देवी मानते हैं, पर मूर्तिपूजा की परम्परा में हमारे हृदय तब तक सन्तुष्ट नहीं होते, जब तक हम उस जीती–जागती, बहती–खिलखिलाती नदी की मूर्ति, मगर पर बैठी कलश लिए मानवाकृति के रूप में बनाकर उसकी आरती नहीं उतारते।"

इस प्रकार लेखक ने इस लेख में वैदिक देवताओं के नाम का आश्रय लेकर मूर्तिपूजा और 'सगुण भक्ति' (साकारवाद) का औचित्य बताने की चेष्टा की है। जैसा कि उन्होंने आगे लिखा है–"यही हुआ है पृथ्वी के साथ। हम उसकी पूजा तो आज भी करते हैं, पर मूर्ति बनाकर। लक्ष्मी यही पृथ्वी है, मूर्ति के रूप में।" फिर लिखा है–"वेद का ऋषि इसी सूर्य और भूदेवी के जोड़े का आराधक था। मूर्तिपूजा की परिकल्पना में वह हो गया लक्ष्मी और नारायण का जोड़ा।" लेखक ने ऐसा विधान कर वैदिक ऋषियों को भी सूर्य और पृथ्वी जैसे जड़ कार्य–पदार्थों (सम्भूति) के आराधक घोषित कर दिया है। महर्षि दयानन्द जी का चिन्तन भिन्न है। उन्होंने लिखा है– "देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं, जैसी कि पृथ्वी। परन्तु इसको कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना है। देखो! इसी मन्त्र (**'यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः'**–ऋग्वेद 1.164.31) में कि जिसमें सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है। यह उनकी भूल है, जो 'देवता' शब्द से (सदैव) ईश्वर का ग्रहण करते हैं। परमेश्वर देवों का देव होने से 'महादेव' इसीलिए कहाता है कि वही सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रयलकर्त्ता, न्यायाधीश, अधिष्ठाता है।" (सत्यार्थप्रकाश, सप्तम समुल्लास) ऐसा ही उन्होंने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ के 'वेदषियविचार' प्रकरण में लिखा है–"इन (चालीस देव) में से कोई भी उपासना के योग्य नहीं हैं, किन्तु व्यवहारमात्र की सिद्धि के लिए ये सब देव हैं, और सब मनुष्यों के उपासना के योग्य तो देव एक ब्रह्म ही है। ... जो कोई इससे भिन्न को इष्ट देव मानता है, उसको अन्नर्य अर्थात् अनाड़ी कहना चाहिए।"

लेखक ने अपने लेख में आगे लिखा है–"बहुतों को शायद इस तथ्य का मानने में असुविधा हो कि लक्ष्मी अथवा श्री पूरी तरह हमारी माता पृथ्वी का मानवीकृत रूप है। उनके लिए केवल यह निवेदन ही पर्याप्त है कि वे वेद के उस सूक्त को देख लें, जिसका नाम श्रीसूक्त है, जिसे लक्ष्मी की आराधना का सर्वाधिक प्रभावी साधन माना जाता है और जिसके मन्त्र बोल–बोल कर पुरोहित लोग धन की कामना वाले यजमानों से खीर की सोलह आहुतियाँ दिलवाते हैं। इसके अर्थ की ओर सम्भवतः हम अधिक ध्यान नहीं दे पाते, किन्तु यदि इसका अर्थ समझना चाहें तो पृथ्वी की स्तुति माने बिना इसका अर्थ ही नहीं लगेगा।"

वस्तुतः श्रीसूक्त को वेदों के मौलिक–प्रामाणिक अंश के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं है। उसे वेद–तुल्य प्रमाण नहीं माना जा सकता। श्रीसूक्त की गणना ऋग्वेद के खिल या परिशिष्ट के रूप में ही होती है। अतः इसके आधार पर कोई निर्णय नहीं किया जा सकता। हां, यह तो सच है कि वर्तमान में पौराणिक मान्यतानुसार इसी श्रीसूक्त के माध्यम से लोगों द्वारा ऐश्वर्य, सम्पन्नता, समृद्धि आदि की कामना से स्त्री स्वरूप पौराणिक काल्पनिक लक्ष्मी देवी का अर्चन–रूतवन किया जाता है। परन्तु वैदिक उपासना काण्ड, एकेश्वरवाद व ईश्वर से इस सूक्त को कोई लेना–देना नहीं हैं

वैसे परमान्मा का नाम 'लक्ष्मी' भी है और 'श्री' भी है। जैसा कि महर्षि दयानन्दजी ने लिखा है– "**(श्रिञ् सेवायाम्)**–इस धातु से 'श्री' शब्द सिद्ध होता है। **'यः श्रीयते सेव्यते सर्वेण जगता विद्वद्भिर्योगिभिश्च स श्रीरीशवरः'**। –जिसका सेवन सब जगत्, विद्वान और योगीजन करते हैं, उस परमात्मा का नाम 'श्री' है। **(लक्ष दर्शनाङ्कनयोः)** – इस धातु से लक्ष्मी शब्द सिद्ध होता है। – **'यो लक्षयति पश्यत्यङ्कते चिह्नयति चराऽचरं जगत्, अथवा वेदैराप्तैर्योगिभिश्च यो लक्ष्यते स लक्ष्मीः सर्वप्रियेश्वरः।'** जो सब चराचर जगत् को देखता, चिह्नित अर्थात् दृश्य बनाता, जैसे शरीर के नित्र, नासिका और वृक्ष के पत्र, पुष्प, फल, मूल, पृथिवी, जल के कृष्ण, रक्त, श्वेत, मृतिका, पाषाण, चन्द्र, सूर्यादि चिह्त बनाता तथा सबको देखता, सब शोभाओं की शोभा और जो वेदादि शास्त्र वा धार्मिक विद्वान् योगियों का लक्ष्य अर्थात् देखने योग्य है, इससे उस परमेश्वर का नाम 'लक्ष्मी' है।" (सत्यार्थ प्रकाश,प्रथम समुल्लास)

अतः ईश्वर द्वारा रचित सूर्य, पृथ्वी आदि किसी भी उपकारक प्राकृतिक कार्य–पदार्थ को कि जिसे वैदिक देवता कहा जाता है, उसकी यथार्थ स्तुति (गुण–कथन) न कर, उसके बारे में स्वेच्छाचार पूर्वक पौराणिक कल्पनाओं का घटाटोप खड़ा कर, उसे मानवाकार में चित्रित या मूर्त्तिमान कर, उस अचेतन मूर्ति या प्रतीक की पूजा–आराधना करना सनातन वैदिक ज्ञान का संवर्धन नहीं है, बल्कि एक प्रकार से उसका प्रदूषण या उससे खिलवाड़ ही है। विशुद्ध वैदिक ज्ञान–विज्ञान को तिरोहित कर, बहुदेवतावाद, अवतारवाद एवं मतमतान्तरों की सृष्टि करने में देवताओं के मानवीकरण की यही अविद्याजन्य प्रवृति कारणभूत रही है। अतः सत्य सनातन वैदिक ईश्वरवाद के यथेष्ट विकृतिकरण को 'युगानुरूप परिवर्तन' का लुभावना नाम देकर किए जाने वाले किसी भी प्रयास को रूतुत्य कैसे माना जा सकता है ? आर्य समाज के वैदिक दृष्टिकोण से तो नितान्त नहीं। किसी व्यक्ति के 'हृदय की सन्तुष्टि' के लिए वैदिक तत्त्वज्ञान की बलि तो नहीं दी जा सकती। आर्य समाज को सत्य धर्म प्रवर्त्तन कर सत्यार्थ प्रकाश करना ही होगा। उसी में अखिल मानवता का कल्याण निहित है।

8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जि. भरुच, गुजरात–312014

दयानन्द वाङ्मय पर्यालोचन

● डॉ. प्रमा शास्त्री

...पिछले अंक से जारी

(9) आर्याभिविनय (चैत्र 1932 वि.)

सृष्टिकर्त्ता सर्वनियन्ता सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वर की उपासना–भक्ति और समर्पण अथवा ईश्वर प्रणिधान हेतु वेद की ऋचाओं में क्या कहा गया है, इसका परिज्ञान बहुत ही थोड़े लोगों को था, संस्कृत के सुधी विद्वज्जन भी वेदों को केवल कर्मकाण्ड का ग्रन्थ मानते थे। स्वामी दयानन्द ने ज्ञानकाण्ड, उपासनाकाण्ड और कर्मकाण्ड इन तीनों का मूलस्रोत वेदों को ही निरूपित किया। इसका विशद वर्णन उन्होंने 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' और 'सत्यार्थप्रकाश' में किया है। पुनरपि वैदिक भक्ति के यथार्थ ज्ञान के लिए 'आर्याभिविनय' नामक एक अपूर्व ग्रन्थ की रचना ऋषि ने की ।स्वामीजी ने इस ग्रन्थ की 'उपक्रमणिका' में लिखा है– "इस ग्रन्थ से तो केवल मनुष्यों को ईश्वर को स्वरूपज्ञान और भक्ति, धर्मनिष्ठा, व्यवहारशुद्धि इत्यादि प्रयोजन सिद्ध होंगे। जिससे नास्तिक और पाखण्डमतादि अधर्म में मनुष्य न फँसे।"[12]

इस ग्रन्थ के अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग अध्ययन से यह विदित होता है कि यह ग्रन्थ अपूर्ण है। स्वामीजी इस ग्रन्थ को छह प्रकाशों (अध्यायों) से परिपूर्ण करना चाहते थे। वर्त्तमान ग्रन्थ में केवल दो ही प्रकाश छपे है। स्वामीजी इसमें चारों वेदों, ब्राह्मण और उपनिषद् आदि के मन्त्रों की प्राकृतभाषा (हिन्दी) में व्याख्या करना चाहते थे। प्रस्तुत 'आर्याभिविनयः 'में केवल ऋग्वेद के 53 मन्त्र तथा यजुर्वेद के 54 मन्त्र तथा तैत्तिरीय आरण्यक का 1 मन्त्र कुल 108 मन्त्रों की भक्ति भावपूर्ण मनोहारी व्याख्या है। इस ग्रन्थ की रचना 'सत्यार्थप्रकाश' के प्रथम संस्करण 1931 संवत् के समीपस्थ वर्ष 1932 संवत् में की गई। उस समय तक स्वामीजी को हिन्दी भाषा बोलने वा लिखने का अभ्यास अच्छा नहीं था[13]अतः इसकी भाषा अपरिमार्जित है पुनरपि वह भाषा ग्रन्थ के अनुरूप अत्यन्त ही भक्ति–भावपूर्ण है।

(10) ऋग्वेद भाष्य (प्रथम–बृहद्भाष्य, **द्वितीय**–लघुभाष्य)

ऋषि दयानन्द के पत्रों से यह विदित होता है कि उन्होंने ऋग्वेद के भाष्य का आरम्भ संवत् 1933 वि. में मार्गशीर्ष मास के द्वितीय सप्ताह में किया था। किन्तु छपे हुए ऋग्वेद भाष्य के प्रारम्भ में एक श्लोक में यह लिखा है कि संवत् 1134 के मार्गशीर्ष शु. 6 मंगलवार के दिन ऋग्वेद भाष्य का आरम्भ किया। इन दोनों कालों में पूरा एक वर्ष का अन्तर है। इस एक वर्ष के अन्तराल की समस्या का समाधान पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने इस प्रकार दिया है–"परोपकारिणी सभा के हस्तलेख संग्रह में ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 61सूक्त तक के भाष्य की एक हस्तलिखित प्रति विद्यमान हैं। इस भाष्य में प्रायः प्रतिमन्त्र व्यावहारिक और पारमार्थिक दो प्रकार का भाष्य उपलब्ध होता है। एक वर्ष में 100 श्लोक प्रमाण प्रतिदिन के हिसाब से लगभग 36000 (छत्तीस हजार) श्लोक प्रमाण भाष्य लिखा गया होगा। हमने इस कॉपी को देखा है और इसके संस्कृत पाठ के विशिष्ट भाग की प्रतिलिपि हमारे पास है। उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि 1(एक) वर्ष के अन्तराल में ऋग्वेद का प्रतिमन्त्र दो–दो अर्थवाला भाष्य लिखा गया। जब सन्1935 में पूज्य गुरुवर (पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु) ने परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान हस्तलेखों को व्यवस्थित किया था, उस समय इस पर '**ख**' कॉपी लिखकर इसको सुरक्षित किया था। अब कुछ समय से कहा जा रहा है कि यह भाष्य उपलब्ध नहीं है। यदि वस्तुतः यह भाष्य नष्ट हो गया है, तो यह एक अपूरणीय क्षति होगी।

हमारे विचार में एक वर्ष तक निरन्तर ऋग्वेद का भाष्य लिखने के पश्चात् ऋषि दयानन्द ने सोचा होगा कि इस प्रकार भाष्य का विस्तार करने से वेदभाष्य की रचना में बहुत अधिक काल लगेगा। अतः उन्होंने उसका संक्षेप करके नया भाष्य लिखा । मुदित ऋग्वेद भाष्य के आरम्भ में लिखित काल इस संक्षिप्त (लघु) भाष्य के लेखन को सूचित करता है।

अष्टाध्यायी, धातुपाठ, निरुक्त आदि अनेक ऐसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, जिनके बृहत् और लघु दो–दो प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं। वेदभाष्यों की परम्परा में बेङ्कटमाधव के भी ऋग्वेद के बृहत् और लघु दो भाष्य उपलब्ध होते हैं।"[14]

हमारे विचार में एक वर्ष तक निरन्तर ऋग्वेद का भाष्य लिखने के पश्चात् ऋषि दयानन्द ने सोचा होगा कि इस प्रकार भाष्य का विस्तार करने से वेदभाष्य की रचना में बहुत अधिक काल लगेगा। अतः उन्होंने उसका संक्षेप करके नया भाष्य लिखा । मुदित ऋग्वेद भाष्य के आरम्भ में लिखित काल इस संक्षिप्त (लघु) भाष्य के लेखन को सूचित करता है।

अष्टाध्यायी, धातुपाठ, निरुक्त आदि अनेक ऐसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, जिनके बृहत् और लघु दो–दो प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं। वेदभाष्यों की परम्परा में बेङ्कटमाधव के भी ऋग्वेद के बृहत् और लघु दो भाष्य उपलब्ध होते हैं।"[14]

ऋग्वेदभाष्य में ऋषि ने मन्त्रों का विषय, पदपाठ, पदार्थ, अन्वय, भावार्थ प्रस्तुत करते हुए भाष्य किया है। यहाँ यह विशेषरूप से ध्यातव्य है कि संस्कृत में जो पदार्थ ऋषि ने दिया है वह मन्त्र में विद्यमान पदों के क्रमिक आधार पर ही दिया है। यह आर्ष शैली है। आचार्य यास्क ने अपने निरुक्त में इसी शैली से मन्त्रार्थ किये हैं। ऋषि ने हिन्दी में जो पदार्थ दिये हैं उसका नाम उन्होंने 'पदार्थान्वय–भाषा' रखा था, तथा वह लोकप्रचलित अन्वय के अनुसार दिया है, जिससे विद्वान् और अविद्वान् दोनों ही अपनी–अपनी बुद्धि के अनुसार वेदार्थ का अवगाहन कर सकें। सम्पूर्ण ऋग्वेद की व्याख्या ऋषि नहीं कर सके, निधन हो जाने के कारण 7वें सातवें मण्डल के 61वें (इकसठवें) सूक्त के दूसरे मन्त्र तक कुल 5649 मन्त्रों का भाष्य ऋषि कर पाये। यह भाष्य ऋषि के जीवन–काल में प्रथम मण्डल के 86वें सूक्त तक ही प्रकाशित हो पाया था। शेष ऋग्वेदभाष्य 1946 वि. सं. तक प्रकाशित होता रहा। यजुर्वेदभाष्य के आदि में लिखे गये '**ऋग्वेदस्य विद्याय वै....... भाष्यं** ' पदों को देखकर यह भ्रान्ति फैल गई कि सम्पूर्ण ऋग्वेद भाष्य करने के पश्चात् ऋषि ने यजुर्वेद भाष्य करना प्रारम्भ किया, किन्तु वास्तविकता यह है कि 1934 वि. सं. में ऋग्वेद भाष्य को विधिवत् आरम्भ करके 37 (सैंतीस) दिनों के पश्चात् ही ऋषि ने यजुर्वेद भाष्य करना आरम्भ कर दिया था।स्वामीजी का वेदभाष्य प्रतिमास अंक के रूप में छपता था और प्रत्येक मास प्रसिद्ध व्यक्तियों, संस्थाओं, विद्वानों के पास इन्हें भेजा जाता था, उनमें मुख्य नाम हैं–प्रो. मोनियर विलियम्स, प्रो. मैक्समूलर, महादेव गोविन्द रानाडे, गोपाल राव हरिदेशमुख, पं. केशवचन्द्र सेन, सर टी. माधवराव, राजा जयकृष्णदास तथा महाराज होल्कर आदि ।

(11) यजुर्वेद भाष्य

ऋग्वेद भाष्य आरम्भ करके ऋषि ने यजुर्वेद का भाष्य करना आरम्भ कर दिया। चारों वेद–संहिताओं में मात्र यजुर्वेद–संहिता का ही भाष्य ऋषि पूर्ण कर पाये। इस यजुर्वेद–भाष्य को पूर्ण करने में चार वर्ष दस महीने लगे। ऋग्वेद भाष्य के साथ यजुर्वेद भाष्य का आरम्भ ऋषि ने पं. गोपाल राव हरिदेशमुखजी की सम्मति से किया था ऐसा उनके एक पत्र से ज्ञात होता है। कर्मकाण्डप्रधान यजुर्वेद का सत्य अर्थ जनता में प्रचारित करना देशमुखजी आवश्यक समझते थे, क्योंकि यजुर्वेद के नाम पर मिथ्या अनर्थक कर्मकाण्ड हिन्दू–समाज में प्रचलित था। ऋषि अपने देहावसान तक वेदभाष्य करने में व्यस्त रहे। जोधपुर में एक षड्यन्त्र के तहत विष प्रदान के फलस्वरूप मृत्युरूपी महान् विघ्न के कारण उनका चारों वेदों के भाष्य का कार्य अपूर्ण रह गया। पुनरपि स्वामीजी जितना भी वेदभाष्य कर गये निश्चित ही उससे वेदार्थ की प्राचीन ऋषिनिर्दिष्ट–प्रक्रिया का वास्तविक मार्ग प्रशस्त हो गया।

शेष अगले अंक में....

मुरलीधर डी. ए. वी. अंबाला शहर में गुरुवंदन एवं छात्र अभिनंदन सामारोह

मुरलीधर डीएवी सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल में एक भव्य समारोह आयोजित किया गया,जिसमें भारत विकास परिषद अंबाला शहर की दयानंद शाखा के पदाधिकारियों द्वारा गुरुवंदन एवं छात्र अभिनंदन समारोह आयोजित किया गया, जिसके अंतर्गत स्कूल के सभी शिक्षकों की पुष्प वर्षा से वंदना की गई एवं 10 शिक्षकों को प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया। स्टूडेंट काउंसिल के सभी पदाधिकारियों को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर इंडियन आथर्स एसोसिएशन के पदाधिकारी रितिका एवं गौरव गुलाटी ने एसो. द्वारा स्कूल को अंबाला में शैक्षणिक एवं सहगामी गतिविधियों में सर्वश्रेष्ठ होने का सम्मान प्रदान किया। पंजाब नेशनल बैंक डीएवी कालेज की शाखा द्वारा 12 पंखे उपहार स्वरुप प्रदान करने हेतु शाखा प्रबंधक हरदेव सिंह, उपप्रबंधक वीके जौहर एवं विपणन प्रबंधक परमिंदर स्कूल में पधारे।

सभी उपस्थित अतिथिगण का स्कूल प्रिंसिपल डॉ. आर आर सूरी ने स्वागत किया। विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए डा सूरी ने योगीराज श्रीकृष्ण के कर्तव्य करते रहने के संदेश को याद दिलाया तथा वर्तमान समाज में व्याप्त बुराईयों रूपी कंस को समूल समाप्त करने का आह्वान किया। इस अवसर पर स्कूल में अंतर्सदन भजन प्रतियोगिता आयोजित की गई। कनिष्ठ एवं मनजीत कौर ने निर्णायक की भूमिका निभाई।

उद्‌गीथ ही है परम–औषध

● आचार्य आर्य नरेश

**(रोग, शोक, दुःख, पाप, ताप, घमण्ड, वासना, भ्रष्टाचार निवारणम्
उद्=द्युलोक, गी=अन्तरिक्ष, थम्=स्थल–भूमि जो इन तीनों में व्याप्त है वह ओम्)**

अनादि, निराकार, सर्वव्यापक, जन्म–मरण, क्लेश, रोग, दुःख–रहित, आनन्दमयशक्तिरूप ईश्वर की सन्तानें पीड़ित, चिन्तित तथा भयभीत क्यों? सृष्टिकर्त्ता, वेदज्ञानदाता, अटल न्यायकर्ता, कण–कण में विद्यमान प्रभु को शक्तिरूप सदा व सर्वथा अपने संग मानने वाले आर्यावर्त के ऋषि निरोगता पूर्वक सैकड़ों वर्ष तक समाज–सेवा करते आनन्दपूर्वक निर्भीकता–पूर्वक जीवन व्यतीत करते थे। वे जानते थे कि सर्वव्यापक आनन्द–स्वरूप शक्तिरूप 'परम–औषध' पर पूर्ण विश्वास करने वाले सदा आनन्द में रहते, निष्काम–कर्म करते मोक्ष को प्राप्त करते हैं। हमारे देवों के साथ समाज के साधारणजनों को भी यह पूर्ण विश्वास था कि जिस सर्वत्र सब को प्राप्त महान् शक्ति के प्रति पूर्ण आस्तिकता से अग्नि, वायु, आदित्य अङ्गिरः ब्रह्मा, शिव, राम, कृष्ण आदि देवी–देवता गुरु एवं मुनि सब दुःखों से मुक्त होकर भवसागर से तरकर पार हो गए उसी के ध्यान में आस्था रखकर संसार में जीना सर्व संसारी दुःखों से बचकर सर्वानन्द प्राप्ति का प्रमुख साधन है, परम औषधम् है। हमारे पूज्य पूर्वजों ने पूर्ण आस्था (श्रद्धा) से उस महान् शक्ति से जहां अपना जीवन आनन्दित बनाया वहां उसके द्वारा आर्यावर्त (भारत) राष्ट्र को भी पुण्य गुरु भूमि बनाया।

अज्ञान, अभिमान व लोभ के कारण जब से भारत के अगड़ों और पिछड़ों में आस्तिकता को त्याग कर तथाकथित भक्तों तथा अनाड़ी–स्वार्थीजनों द्वारा चलाये गए मतों में आस्था प्रकट करके नास्तिकता को अपनाया गया तब से भारत का पतन प्रारम्भ हुआ। कुछ स्वार्थी लोगों ने ईश्वरी शक्ति तथा उसके वेदज्ञान को पीछे हटाकर अपने आपको और अपने तुच्छ ग्रन्थों को पूज्य बना दिया।

1. रोगों का कारण ईश्वर की वेदवाणी व तदनुसार आयुर्वेद की अवहेलना करते प्रातः जागरण, प्राणायाम, ओम ध्यान, शाकाहारी भोजन व गोदुग्ध को छोड़कर चाय, काफी, शराब, तम्बाकू, मांस, अण्डा, बहुपत्नी, आचारहीनता से रोगी बने हैं।
2. शोक का मुख्य कारण ईश्वर को सर्वोपरि नित्य न मानकर नष्ट होने वाले संसार को नित्य व सर्वोपरि मानना तथा सब प्राणी उसी के हैं ठुकराकर ईर्ष्या द्वेष से शोक को पाना।
3. दुःख हमें कोई और नहीं देता अपितु हम ही अपना कर्त्तव्य (ड्यूटी) भुलाकर और सबको अपने आत्मा के तुल्य न मानकर एक दूसरे का काम बिगाड़ते तथा अपमान तथा तिरस्कार करते एक दूसरे को दुःख देते हैं कि कोई नहीं देखता।
4. पाप वही है जो ईश्वर की आज्ञा वेद धर्म का पालन न करके झूठ बोलना, हिंसा करना, मिलावट करना, अधिक मूल्य लेना तथा दूसरों के धन को व समय को नौकरी करके चोरी से लेना।
5. घमण्ड तभी उत्पन्न होता है जब हम ईश्वर को सारे संसार का स्वामी तथा सबसे बड़ा न मानकर अपने का बहुत बड़ा धनवान, सबसे बड़ा बलवान व महाविद्वान मानकर ईश्वर की वेद–आज्ञा के अनुसार न चलकर अपनी तुच्छ मनमानी से लोगों को चलाने लगते हैं।
6. वासना का ताण्डव–नृत्य जिससे दादी, माँ, बहन, पत्नी, पुत्री तथा पौत्री की लाज लुट रही है और राम, कृष्ण, दयानन्द महासंयमी पुरुषों की सन्तानें व्यभिचार में डूबी है उसका मूल कारण वेदधर्म से विरुद्ध एक पति–एक पत्नी 16 व 25 तक पूर्ण ब्रह्मचर्य और अन्य महिलाओं को मातृवत न समझना है। यदि शक्तिरूप ईश्वर को सर्वत्र मानकर और पाप करने पर दण्ड देने वाला जानकर आचरण करें तो न रहे।
7. भ्रष्टाचार का मूल कारण सारे संसार की सम्पदा को भगवान की व सबके लिए न मानकर अपनी मानकर लोभ से जोड़ना और अन्यों को गरीब बनाना।
8. सब उपरोक्त दुःखों से बचकर यदि ईश्वर ओम् शक्ति को सदा साथ मान पाप से बचें एवं प्रातः सायं अर्थपूर्वक ओम् ध्यायें व आनन्द से जीएँ एवं झूठे व्यक्तियों व शक्तियों से बचें।

नोटः महाशक्ति परम औषध की सिद्धि हेतु सत्यार्थप्रकाश 7 समु. पढ़ें।

वैदिक साधन आश्रम
उदगीथ, हि.प्र.
पिन–173101
मो. नं. 09418021091

गुरु शिष्य को गर्भ में धारण करे

● डॉ. अशोक आर्य

वेद में विद्यार्थी के लिए जिस अनुशासन का वर्णन किया गया है, आज का विद्यार्थी उसे पुरानी बातें मानने लगा है। वह पुराणी लकीरों पर चलना नहीं चाहता। वास्तव में आज का विद्यार्थी केवल अपने अधिकारों की और देखता है, कर्तव्यों की उसे चिंता भी नहीं है। यह सब मैकाले की दी हुई शिक्षा पद्धति का ही परिणाम है। जब तक देश में गुरुकुल शिक्षा पद्धति रही तब तक गुरु शिष्य का उत्तम समन्वय होने के कारण विद्यार्थी अनुशासन से अलग नहीं होता था किन्तु मैकाले ने जो विष भारत के विद्यार्थियों में भरा, उसका परिणाम हमारे सामने है। आज हम इस त्रुटि से दुःखी तो हैं किन्तु इसका समाधान खोजने की नहीं सोचते। जब इसके समाधान पर विचार करते हैं तो एक दम वेद की शिक्षाएँ हमारे सामने आती हैं। देखें यजुर्वेद इस सम्बन्ध में क्या कह रहा है

**आधत्त पितरो गर्भ कुमारं पुष्करस्रजम्।
यथेह पुरुषोऽसत्।। यजुर्वेद 2.33।।**

यजुर्वेद का यह मन्त्र उपदेश करते हुए हमें मार्ग दर्शन कर रहा है और बता रहा है कि ईश्वर की आज्ञानुसार सकल जगत् के सब स्त्री तथा पुरुषों में जितने भी विद्वान् लोग हैं, वे सब विद्यार्थी कुमारों को इस प्रकार अपने गर्भ में धारण करें, जिस प्रकार स्त्री अपने गर्भ को धारण करती है।

मन्त्र संकेत कर रहा है कि गुरु को चाहिए कि वह अपने शिष्यों को अपने गर्भ में धारण करे। हम जानते हैं कि एक महिला माता बनने के लिए अपने गर्भ में संतान का किस प्रकार पालन करती है? उसकी गर्भस्थ संतान नौ महीने तक उसके गर्भ में रहती है। इस नौ महीने में उस माता का जीवन संकटों से भरा होता है। वह प्रतिक्षण इस गर्भस्थ शिशु को सँभालती है। इस शिशु को कोई कष्ट न हो इसके लिए स्वयं कष्टों में रहती है।

इस अवस्था में वह न ठीक से चल सकती है, न ठीक से लेट अथवा सो सकती है, न ठीक से किसी से बात ही कर पाती है और न ठीक से खा ही पाती है। वह बहुत कमजोर हो जाती है, अशक्त सी हो जाती है। उसे बहुत धीरे और सँभल कर चलना होता है, ताकि उसकी संतान जो आने वाली है सुरक्षित रहे। ऊँचे स्थान पर नहीं जा सकती, सँकरे स्थान पर भी वह कष्ट अनुभव करती है तथा उबड़ खाबड़ स्थान पर किसी की सहायता के बिना चल ही नहीं पाती। कई बार तो एक छोटी सी ठोकर उसकी मृत्यु का कारण बन जाती है अथवा उसका गर्भस्थ शिशु नष्ट हो जाता है अथवा गिर जाता है। गर्भस्थ शिशु के गिरने से भी माता के जीवन को संकट में डाल देता है और अनेक बार तो इस अवस्था में माता की भी मृत्यु हो जाती है।

इसलिए ही गुरु के लिए मन्त्र आदेश देता है कि गुरु अपने शिष्य को अपने गर्भ में इस प्रकार धारण करे, जिस प्रकार माता अपनी संतान को एक लम्बे समय तक अपने गर्भ में रखते हुए उसकी सुरक्षा का हर संभव यत्न करती है। गुरु भी बालक को अपने गर्भ के समान ही अपने पास रखे तथा सुखों की कामना करते हुए इस प्रकार के उपाय करे कि उसका शिष्य अपने आप को सुरक्षित अनुभव करे तथा किसी भी संकट के समय गुरु के चरणों में जाकर अपनी समस्या गुरु के सामने रखे और उसका समाधान गुरु से प्राप्त करे। इस प्रकार गुरुकुल में रहते हुए बालक अपनत्व की भावना से रहे और उत्तम शिक्षाओं को ग्रहण करे। जब गुरु से बालक को मातृवत् स्नेह मिलेगा तो निश्चय ही बालक गुरु आज्ञा में रहेगा तथा सब प्रकार के अनुशासन का पालन करेगा।

हम यह भी जानते हैं कि गर्भ में रहते हुए बालक बढ़ता रहता है। इस प्रकार ही गुरुकुल में रहते हुए गुरु से बालक को निरंतर शिक्षा मिलती रहती है। गुरु के इन उपदेशों से बालक का ज्ञान, बालक की बुद्धि, बालक के आचार विचार भी बढ़ते रहते हैं, वृद्धि को प्राप्त होते रहते हैं। इससे ही शिष्यों की अच्छी तथा श्रेष्ठ विद्या तथा गुरु की दी गई शिक्षा से उस ब्रह्मचारी अथवा उस शिष्य की श्रेष्ठ विद्या से वृद्धि व उत्तम पालन का कार्य गुरु द्वारा गुरुकुल में रहने वाले बालकों का होता है।

गुरु चाहता है कि उसके शिष्य पुरुषार्थी बनें। वह चाहता है कि उसके शिष्य पुरषार्थ करते हुए सदा सुखी रहें। गुरु अपने शिष्यों को पुरुषार्थी व सुखी बनाने के लिए अत्यधिक पुरुषार्थ करते हुए उन्हें मेधावी बनाने के लिए सदा यत्न करता है। एक उत्तम माता की संतान सदा उत्तम ही होती है। इस प्रकार ही एक उत्तम गुरु की संतान (शिष्य) भी मेधावी, पुरुषार्थी, तथा कर्मशील रहते हुए अपने कर्म तथा अपने पुरुषार्थ के कारण अपने माता–पिता के साथ ही साथ अपने गुरु का नाम भी अमर करने का कारण बनते हैं। इस प्रकार का अनुष्ठान, इस प्रकार का पुरुषार्थ गुरु को सदा ही करते रहना चाहिए। जब गुरु सदा इस प्रकार का पुरुषार्थ करेंगे तो निश्चय ही इस देश की भावी संतान आज्ञाकारी, पुरुषार्थी, माता–पिता तथा गुरुजनों का सम्मान करने वाली, देश की उन्नति व रक्षा चाहते हुए पुरुषार्थ करने वाली होगी, तथा सदा अनुशासन–प्रिय होगी।

104– शिप्रा अपार्टमेन्ट
कौशाम्बी–201010 गाजियाबाद
मो. 8718528068

ऋषिवर! तुम्हें प्रणाम

● डा. महेश विद्यालंकार

भारत के भाग्योदय के उज्ज्वलतम प्रकाशरूप देवात्मा गुरुवर देव दयानन्द को इस नश्वर व निरीह संसार से विदा हुए एक सौ ग्यारह वर्ष हो चुके हैं। प्रतिवर्ष जन्मोत्सव, बोधोत्सव, निर्वाणोत्सव मनाकर आर्य समाज उनका वाचिक स्मरण कर लेता है। सदियों के बाद इस धरा धाम का सौभाग्य जगा था, जो आप जैसी जीवात्मा का आगमन हुआ। आप दैवीय गुणों से युक्त ज्योतिपुज के रूप में जीवन जगत् में व्याप्त अविद्या, जड़ता, अविश्वास, रूढ़ियों आदि को अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से हटाते एवं मिटाते । आप ब्रह्मनिष्ठ, तपोनिष्ठ, सत्य प्रतिष्ठ के साकार रूप थे। आप महामानव, देवर्षि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, ही नहीं, आप महर्षि थे। आप वीरता, धीरता, गंभीरता, सरलता, दयालुता आदि की जगमगाती प्रतिमूर्ति थे। आपके चुम्बकीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व में राम की मर्यादा, कृष्ण की नीतिमत्ता, भीष्मपितामह का ब्रह्मचर्य, गौतम की करुणा, महावीर की और शंकर के पाण्डित्य का अपूर्व कांचन संयोग था। आपको जितने भी विशेषणों से भूषित करूँ, सभी आपके महान व्यक्तित्व के समक्ष हल्के पड़ जाते हैं।

आपके स्मरण मात्र से हृदय श्रद्धा भर उठता है। सिर चरणों में झुकने लगता है नेत्र सजल होकर आपकी स्मृति में अर्ध्य चढ़ाने लगते हैं। रोम–रोम आपकी दया और उपकारों से सिहर उठता है। आप धन्य थे। प्रभु के मानस पुत्र थे। शरीर में व्याप्त त्रिविध दुःखों के संकटत्राता, मानवता के गायक और संसार के तारक थे। आपका महान इतिहास वन्दनीय है। आपके उपकार वन्दनीय हैं। आपकी सेवाएँ और योगदान अर्चनीय हैं। सारा जीवन अनुकरणीय है। आपका त्याग और बलिदान स्पृहणीय है। आपने कितने लोगों को जीवन दिया। सुप्त भारतीय संस्कृति, सभ्यता और मूल्यों के प्रति लोगों में भाव जाग्रत कर आभारतीय स्वर्णिम उज्जवलतम इतिहास के प्रेरक पृष्ठों को संसार के सामने रखा जो आपके संपर्क में आया वह अमूल्य बन गया। ऋषिवर आप क्या थे यह सारा संसार न जान सका। आप संसार के देवदूत बनकर आए थे। आप शोधक, सत्य के पुजारी और सत्य शहीद हुए। आपकी उल्लेखनीय सफलता रही है जो सत्य के प्रचार–प्रसार कार्य में जो पांखड अवतार, पीर, पैगम्बर, सन्त, महाराज आदि आए उन्हें तर्क युक्ति व शास्त्रार्थ से परास्त कर **"सत्यमेव जयते"** के अमर वाक्य को जीवित किया। आपका संकल्प था **"सत्यं वदिस्यामि"** कभी विचलित नहीं हुए। आपने सत्य की स्थापना के लिए न जाने कितनी बार जहर पिया, पत्थर खाए, अपमान सहा है। अन्त में सत्य के लिए ही जीवन न्योछावर कर दिया। सचमुच! आप जीवन विषपायी थे। हँस–हँस कर जहर पीते रहे, संसार की दुर्गति अज्ञानता पर रातों जागकर आँसू बहाते रहे। आपका सारा जीवन प्रेरणा का जीवन रहा है।

आर्य समाज आपका लगाया हुआ बागीचा है। इस बगीचे को पल्लवित व पुष्पित करने के लिए आपने अपार कष्ट उठाए। खून–पसीना और सर्वस्व देकर आपके भक्तों और अनुयायियों ने हरा भरा रखा। इसका मान, सम्मान, चिन्तन, आदर्श, मान्यताएँ स्वदेश व विदेश सभी जगह फैलीं। आपने आर्य समाज को एक प्रकाश स्तम्भ के रूप में स्थापित किया जो जीवन को प्रत्येक दिशा में सत्य प्रकाश प्रदान करे। इसका चिन्तन मानवता का है। आपने आर्य समाज को "वैदिक धर्म" का प्रचारक प्रसारक एवं उद्धारक के रूप में नियुक्त किया। आपने ही सदियों के बाद पहली बार उच्च स्वर से घोषित किया वेद ईश्वरीय ज्ञान है। सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद प्रभु का आदेश है, उपदेश है और संदेश है। वेद सबके हैं। सबके लिए हैं और सबको पढ़ने का अधिकार है। आपने ही नारी जाति की वकालत करके उसे पुनः मातृशक्ति के पद पर प्रतिष्ठित किया। आपने आर्य समाज के माध्यम से संसार को आत्मा, परमात्मा, धर्म, भक्ति, जीवन, और जगत् को सीधा संच्चा व सरल मार्ग दिखाया। आपने इसके चिन्तन में व्यावहारिकता, वैज्ञानिकता, उपयोगिता तथा तर्क बुद्धि प्रदान की। इन समग्र विशेषताओं और योगदान के कारण आर्य समाज को इतिहास व जगत ने रेखांकित किया। लोगों को कहना पड़ा– **जहाँ–जहाँ आर्य समाज है, वहाँ–वहाँ जीवन है।**

किन्तु मेरी श्रद्धा व आस्था के आधार ऋषिवर मर्मान्तक पीड़ा से लिख रहा हूँ कि आज तुम्हारा आपका हुआ आर्य समाज रूपी बगीचा उजड़ रहा है? सूख रहा है? बिखर रहा है? काटा जा रहा है? सार्थक सिद्धान्तों, विचारों और आदर्शरूपी वृक्षों को हटाकर स्वार्थ, पद, अंहकार तथा भौतिकता के वृक्ष रोपे जा रहे हैं। इसलिए तेरे बगीचे की रौनक, खुशबू व आकर्षण क्षीण हो रही है। अब इस बगीचे से ठण्डी शान्त व प्रेरक हवाएँ नहीं आ रहीं हैं। झगड़ों विघटन और स्वार्थ की गर्म हवाएँ बहने लगी हैं। बगीचे के रक्षक ही भक्षक बन रहे हैं। सर्वत्र बिखराव, भटकाव तथा स्वार्थगत, दलगत, कुत्सित राजनीति आग की तरह फैल रही है। इसलिए आज का आर्य समाज शरीर से चाहे लम्बा चौड़ा व फैला नजर आता हो किन्तु आत्मा विचार, प्रभाव, रचनात्मक कार्यों की दृष्टि से सिकुड़ता जा रहा है। यह हम सबके लिए विचारणीय तथा चिन्तनीय है आर्य समाज अपने सत्य स्वरूप, उद्देश्य, कर्तव्य व लक्ष्य से भटक रहा है। यह वैचारिक चिन्तन है। आज अच्छे सही व पथ प्रदर्शक विचार कहीं नहीं मिल पा रहे हैं। आर्य समाज दुनिया की सर्वोत्तम विचारधारा का धनी है। किन्तु..... परन्तु...... लेकिन...... इसकी चारित्रिक गरिमा की साख में, पहचान में और विश्वसनीयता में निरन्तर गिरावट आ रही है। जो संस्थानों, संगठनों, सभाओं, मन्दिरों व व्यक्तियों में आकर्षण तथा विशेषताए होनी चाहिए वे प्रायः लुप्त हो रहीं हैं। इसलिए आर्यसमाज के क्रिया–कलापों पर लोग प्रश्नचिह्न लगा रहे हैं। मन्दिर व जलसे उपस्थिति के लिए तरस रहे हैं। संस्थाएँ सूनी पड़ीं हैं। कुछ खो गईं, कुछ सो गईं। कुछ रो गईं। अध्यात्म, भक्ति व चरित्र सुधार के लिए किसी के पास फुर्सत नहीं है। नीचे से ऊपर तक सारा ढाँचा लड़खड़ा रहा है। कोई किसी की न सुनता है, न मानता है और न महत्त्व देता है। प्रायः व्यापार बुद्धि से ऋषि और आर्य समाज को कैश किया जा रहा है। मिशनरी भावना तथा सेवा कर्त्तव्य की भावना समाप्त हो रही है। विद्वान, वक्ता, उपदेशक, पुरोहित, संन्यासी आदि दुर्लभ हो रहे हैं। जो हैं अपनी अलग दुकानें खोल ली हैं। सस्ता चमकीला, मनोरंजक व सबको राजी करने का माल धड़ा धड़ बेच रहे हैं। सिद्धान्त कोने में खड़े हो रहे हैं। दयानन्द और आर्य समाज टिकट पाने का ऊँचा पद हथियाने का, संस्था संगठनों पर कब्जा करने का और हवाई जहाजों पर उड़ने का साधन व माध्यम बन रहे हैं। यही हमारे पतन की पराकाष्ठा है।

दीवाली ऋषि की स्मृति का पर्व है। प्रभु के वरदपुत्र देव दयानन्द की गौरव गाथा स्मरण करने की पुण्य तिथि है। आत्म चिन्तन, आत्म निरीक्षण तथा आत्म सुधार की मंगल बेला है। असत्य से सत्य की ओर, पाप से पुण्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, स्वार्थ से परमार्थ की ओर बढ़ने का प्रेरक अवसर है। उस महापुरुष के उपकारों, महत्व तथा योगदान का स्मरण करने का संदेश हर साल दीवाली देती है।

ऋषि भक्तो! आर्यो! उठो! जागो! आँखे खोलो! अपने स्वरूप को पहचानो! शान्त सात्विक शब्दों में अपने हृदय की धड़कनों पर हाथ रखकर अपने से पूछो– मैंने ऋषि और उनके मिशन आर्य समाज के लिए क्या किया और क्या कर रहे हैं? नहीं किया तो सच्चे अर्थों में करने कराने का संकल्प व व्रत लें। तभी ऋषि निर्वाणोत्सव मनाने की, उन्हें श्रद्धांजलि देने की सार्थकता तथा व्यावहारिकता होगी। हम वहीं के वहीं हैं दीवाली आती है चली जाती है।

बी.जे. 29, पूर्वी शालीमार बाग
दिल्ली–52

☞ *पृष्ठ 05 का शेष*

"पाप और पुण्य से जन्म ...

अभिशाप भी प्राप्त हो रहा है।

वैज्ञानिक भी फैलते हुए प्रदूषणों और अन्तरिक्ष में बढ़ते हुए विषों से बहुत चिन्तित हैं, उन्होंने अनुमान लगाया है कि वायु मण्डल में यदि इसी प्रकार विषाक्त द्रव्यों का संचय होता रहा तो कुछ वर्षों में वायु जलादि के दूषित होने से प्राणी जीवित नहीं रह पायेंगे। ट्रक, बस, इंजिन, मिलों की चिमनियाँ, बारूदी धुएँ, आणविक बमों के परीक्षणों से विकिर्ण रेडिओधर्मिता बराबर बढ़ रही है, जिनसे समुद्र के पानी पर बुरा असर पड़ रहा है। समुद्र के जल में आणविक कचरों के मिलने से वृष्टि के जल दूषित होने लगे हैं जिसका दुष्प्रभाव कृषि खाद्यान्न के बीजों तथा प्राणियों पर भी पड़ने लगा है। (नये–नये रोग उत्पन्न होने लगे हैं) आज किसी को भी शुद्ध आक्सीजन प्राप्त नहीं है। इस संकट के कारण भौगोलिक तापमान बढ़ता ही जा रहा है। फलतः उत्तरी–दक्षिणी ध्रुव केन्द्रों में जमी बर्फ पिघलने लगी है। अतः दैवी शक्ति से जब छेड़खानी होती रहेगी तब उससे मानव समाज को शांति कैसे मिल सकती है, उन्हें प्राकृतिक विपदा से दण्डित होना ही पड़ेगा। इस प्रकार पंचतत्वों के संतुलन में एक सूक्ष्म परिवर्तन होने लगा है जिससे संसार को महान भय है।

इसके अलावा हरिद्वार के गंगा एवं अन्य नदियों में गन्दगी होने से उनके जलों को दूषित होना प्राणियों के लिये अनेक प्रकार से प्रदूषण बनने लगा है। जैसे इनके जलों का शोधन करना आवश्यक है वैसे ही अन्तरिक्ष में बढ़ते हुए विषों को (यज्ञादि द्वारा) निर्विष करना जरूरी है। यदि सभी वाहन, सभी कारखाने बिजली अथवा सौर ऊर्जा से चलाये जायँ तो फैलते हुए प्रदूषणों को रोका जा सकता है।

यदि मौसम विभाग के वैज्ञानिक जन चाहते तो जिस क्षेत्र में प्राकृतिक विपदा

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पत्र/कविता

पछताओगे! पाश्यात्य और पौर्व्य देश आन्तरिक स्थिति का अवलोकन नहीं कर पाते

- पाश्चात्य और पौर्व्य विकसित देशों की बाह्य चकाचौंध करने वाली भौतिक प्रगति को देखकर अधिकांश व्यक्ति प्रभावित होते हैं और वैसा ही बनने का विचार करते हैं, प्रयास भी करते हैं किन्तु सूक्ष्म दार्शनिक दृष्टि न होने के कारण वे आन्तरिक स्थिति का अवलोकन नहीं कर पाते और एक भ्रान्त धारणा बन जाती है कि ये सुखी हैं, शान्त हैं, सन्तुष्ट हैं। किन्तु वास्तव में ऐसा होता। बिना आत्मा–परमात्मा को जाने, बिना सच्चे वैदिक ज्ञान के अनुरूप अपने जीवन को चलाये, मनुष्य कितनी ही धन सम्पत्ति प्राप्त क्यों न करले, पूर्ण सुखी नहीं हो सकता। दु:खों से घिरा रहता है।
- वैदिक ऋषियों ने ईश्वर का ध्यान, आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय, सत् पुरुषों का संग, पुनर्जन्म, कर्मफल, समाधि, वैराग्य, व्रत, तप, संयम आदि आध्यात्मिक विषयों तथा सिद्धान्तों को "सांपराय" शब्द से इंगित किया है, जो मनुष्य इन विषयों का ज्ञान और तत्सम्बन्धी आचरण नहीं करते हैं वे "मूढ़" संज्ञक मनुष्य होते हैं, ऐसे मनुष्यों की मान्यता यह होती है कि "This is the first and last life, there was no life before this life and there will be no life after this life." यही जीवन है, न इससे पूर्व जन्म था, न मरने के पश्चात् होगा। अपने इस चार्वाक्/विरोचन/नास्तिकवादी सिद्धान्त के कारण अपनी बुद्धि, शक्ति, साधन, समय, चातुर्य, श्रम का पूर्ण रूप से इसी जीवन को, अधिकाधिक सामर्थ्यवान्, बनाकर अधिकाधिक भोगों को भोगने का प्रयास करते हैं और इस एकांगी क्षेत्र में वे सफल हो जाते हैं। किन्तु इस जीवन के बाद सर्वथा विनाश है, अंधेरा ही अंधेरा है, दु:ख ही दु:ख है।
- जब किसी व्यक्ति–समाज–राष्ट्र का जीवन का लक्ष्य ही भिन्न होगा, तो दिशा भी भिन्न होगी, मार्ग भी भिन्न होगा, साधन भी भिन्न होंगे, और शैली भी। बुद्धिमान् व्यक्ति अन्य व्यक्ति के रूप, रंग, आकृति, बल, बुद्धि, सामर्थ्य, पद, प्रतिष्ठा, भौतिक सम्पत्ति, ऐश्वर्य आदि को देखकर यह नहीं मान लेता कि यह पूर्ण सुखी है, शान्त है। पूर्ण सुखी होने की कुछ कसौटियां हमारे ऋषियों ने निर्धारित की हैं, यदि व्यक्ति उन कसौटियों पर खरा उतरता है, तो वह सुखी हो सकता है, यदि उन पर व्यक्ति उत्तीर्ण नहीं होता है, तो वह निश्चित रूप से अशान्त, चिंतित, भयभीत, दुखी रहता है, चाहे बाह्य लक्षणों से दिखाई न दे।
- प्रेय माग के पथिक, चाहे पश्चिम में हों या पूर्व में या अपने देश में, ये बिना श्रेयमार्ग के सिद्धान्त शैली को अपनाये, पूर्ण सुखी हो ही नहीं सकते हैं, चाहे कितनी ही भौतिक उन्नति क्यों न कर लेवें। सच्चे ईश्वर तथा ईश्वराज्ञा को न मानने वाला व्यक्ति असामान्य/प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्ति/परिवार/समाज/राष्ट्र का अहित करने को समुद्यत हो जाता है। जिन मनुष्यों को अन्त:करण में ईश्वर के अस्तित्व का बोध नहीं होता है, अथवा जो, शब्द प्रमाण वा अनुमान प्रमाण से ईश्वर को स्वीकारते तो हैं किन्तु व्यवहार में ईश्वराज्ञा के विरुद्ध आचरण करते हैं, उनकी भी आत्मा में परमात्मा का प्रकाश विलुप्त हो जाता है। ऐसे व्यक्ति बुरे कामों को करते समय, ईश्वर की ओर से भय, शंका तथा लज्जा–स्वरूप संकेतों का ग्रहण नहीं कर पाते हैं और वे स्वच्छंद होकर, निर्लज्ज होकर, पाप–अपराधों को करते रहते हैं।
- हे परमेश्वर! हम अपने से निम्न स्तर के मनुष्यों को देखकर खिन्न होते हैं, घृणा–ग्लानि करते हैं, किंतु इससे क्या लाभ? जब आत्मनिरीक्षण करते हैं तो स्वयं में भी अनेक अवगुण, दिखाई देते हैं। अवगुण न हों या न्यून हों, फिर भी अन्यों के दोषों को दूर करने का साहस, उत्साह, पराक्रम हमारे में नहीं है। ये साहस, बल, पराक्रम आदि गुण तब तक पूर्णरूप से नहीं उभरेंगे, जब तक हम स्वयं दोष रहित नहीं होंगे। इसलिए अब तो हमारी आपसे यही प्रार्थना है कि सर्वप्रथम हमारे समस्त दुर्गुणों को विनष्ट कर दो और समस्त भद्र गुणों से हमें परिपूर्ण कर दो। तब आपके विशेष ज्ञान–बल–सामर्थ्य से युक्त न होकर न केवल अपने आर्यावर्त की, अपितु सम्पूर्ण विश्व की अवैदिक परम्पराओं को समाप्त करके, उनके स्थान पर विशुद्ध वैदिक शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, खान पान, आचार, विचार गौरवमयी–अस्मिता की स्थापना करने में समर्थ में जायेंगे और आपको आपका "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का आदेश पूरा कर देंगे, इसी आशा विश्वास के साथ–

ज्ञानेश्वरार्य
आर्य समाज
बैंकाक, जी.पी.ओ.799

****

लोकतंत्र मर जाये भले

सत्ताविहीन और सत्तारूढ़ दोनों
आपस में ही उलझे रहेंगे,
तन मन और धन फूंकते रहेंगे।
एक दूजे को नीचा दिखाते रहेंगे।
अपने अपने स्वार्थ में लड़ेंगे।
मानवता को विकृत बनाते रहेंगे।
लोकतंत्र मर जाए भले

सुकोमल कन्याओं पर होता बलात्कार
कुत्सित मानसिकता पर अंकुश नहीं
नारी की अस्मिता लुट रही
प्रचार पैसे से चल रहा।
कब आएँगे वो अच्छे दिन
वादे हैं इन वादों का क्या
लोकतंत्र मर जाए भले

हर तरह का प्राणी इस धरा पर
सदैव आता और जाता रहेगा।
अपने सच को जानते हुए
अपनी ड्यूटी निभाते चलो,
दाएं बाएं आगे पीछे ऊपर नीचे
ए भाई देखके चलते रहो।
लोक तंत्र मर जाए भली

रामधारीदास वडाला
मकान नं. 593/13
हुडा कालोनी
भिवानी (हरियाणा)

राष्ट्र-रक्षा सर्वोपरि है

पाक पूरा कश्मीर खाली करे नहीं तो भारत सरकार सभी सम्बंध तुरन्त बन्द करें। भारत पुलिस और सेना को अलगावादियों व आतंकियों को देखते ही गोली मारने का आदेश दे। अखिल भारत हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय प्रवक्ता श्री जंग बहादुर क्षत्रिय ने प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी से मांग की है कि 68 वर्षों से पाक कश्मीर के नाम पर भारत में अस्थिरता फैला रखी है। 5 बार हमला कर चुका है। हजारों सेनानियों को बलिदान हो चुका है। प्रधानमन्त्रियों की गलत नीति के कारण भारत पुरे कश्मीर जो खाली करने में असफल रहे है। श्री क्षत्रिय जी बताया की पाकिस्तान भारत को परमाणू बम की धमकियाँ दे रहा है। यह राष्ट्र की चिन्ता का विषय है। राष्ट्र रक्षा सर्वोपरि है। भारत देश में अलगाववाद और आतंकवादियों ने विराट रूप ले लिया है सरकार, पुलिस और सेना को आदेश दे कि पाक समर्थकों व एजेन्टो को देखते ही गोलियों से उड़ादे ताकि देश में शान्ति का निर्माण हो सके।

जगंबहादुर क्षत्रिय
हिन्दू राष्ट्र भवन श्री राम नगर
जालन्धर मो. 78374–60375
09599552030

****

☞ पृष्ठ 09 का शेष

"पाप और पुण्य से जन्म ...

आने वाली थी, उसके पहले ही सूचित कर देते तो इतनी बर्बादी, इतने मनुष्य अकाल मृत्यु को प्राप्त न होते। परमात्मा की सृष्टियों से आज के वैज्ञानिकों ने बहुत तरक्की कर ली है। इस विज्ञान के युग में इतने नर संहार का होना, यह सब मंत्रियों एवं उनके कर्मचारियों की लापरवाही का परिणाम है। उदाहरण के लिये बिना सूचना दिये नदी में बाँध का जल छोड़ देना और लोगों का बह जाना यह बहुत भारी गलती है। इन्हीं त्रुटियों के कारण विमान आदि की दुर्घटना हो जाती है जिसमें सवार प्रायः सभी लोग अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। ईश्वर का नाम ध्यान करने से भी वह उन्हें नहीं बचा पाता, क्यों?

उत्तर– इस संसार को सूर्य की ऊर्जा से जीवन प्राप्त हो रहा है और उसके प्रकाश में जन्म और मृत्यु दोनों हो रहे हैं, किन्तु दुर्घटना का दोषी सूर्य रूपी ईश्वर को नहीं ठहराया जा सकता। जिस प्रकार बिना कुपथ्य के, बिना दूषित वातावरण गन्दगी के शरीर रोगी नहीं हो सकता, उसी प्रकार बिना दोष या त्रुटि के कोई भी यान–दुर्घटनाग्रस्त नहीं हो सकता। दुर्घटना के समय ईश्वर को पुकारने से वह सहायता क्यों नहीं करता? तो वह इसलिये कि वह नियम के विरुद्ध के पक्ष में नहीं है। उसका नियम ही ऐसा बना है, कि जैसा किया गया है वैसा ही सुख–दुःख मिलता है।

मनुष्य वर्तमान अथवा पूर्वजन्म के कर्मदोष तथा किसी दुर्घटना या आयु की समाप्ति पर किसी रोग के कारण अतिक्षीण होने पर मारे जाते हैं। अकाल मृत्यु और काल मृत्यु के अनेक कार्य–कारण होते हैं। तात्पर्य यह कि जिस ईश्वरीय नियम से जहाँ–जहाँ तक नाश होता है, वहाँ–वहाँ से पुनः उत्पत्ति का क्रम आरम्भ होने लगता है। (इसमें परिवर्तन भी होता है)

आज मनुष्य के कर्म दोष से ही प्राकृतिक विपदा की उत्पत्ति अधिक होने लगी है। दैवी शक्तियों की छेड़खानी से प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने लगा है। परिणाम पहले लिख चुके हैं, अतिशीत लहरी, अतिताप, अतिवृष्टि व बिजली के गिरने से अनेक प्राणी अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

मनुष्य जैसा कर्म करता है, ईश्वर वैसा ही जानता है, और जैसा जानता है वैसा ही सुख–दुःख का फल भोगता है। यह सुख–दुःख किसी कारण वश अपने या पराये व्यक्तियों के द्वारा भी प्राप्त होता है।

जब जापान के हिरोशिमा में परमाणु बम गिरा था तब उस समय अनेक नर–नारियों का संहार हो गया था और उसका दुष्प्रभाव इतना हुआ कि जो बालक जन्म लेते वे विकलांग होने लगे थे। प्राकृतिक विपदा से तो कहीं–कहीं कुछ भाग बरबाद हो जाते हैं, किन्तु मानव निर्मित एटम–बमों के प्रयोग से तो सारे संसार का सर्वनाश हो सकता है।

'स्वस्तिपन्था' में ई. मधुसूदन आर्य लिखे हैं कि– 1– पर्यावरण–प्रदूषण में प्राकृतिक तत्वों को दूषित करने वाले सभी प्रकार के हानिकारक तत्व आते हैं। इनमें मुख्य रूप से चार तत्वों का वर्णन वेदों में प्राप्त होता है। 1– भूमि–प्रदूषण, 2– जल प्रदूषण, 3– वायु प्रदूषण, 4– ध्वनि प्रदूषण। ऋग्वेद, 10,66,10 के अनुसार 'सूर्य और वायु मण्डल ऊर्जा (Oxygen) देकर मानव–मात्र को जीवित रखते हैं। वृक्ष–वनस्पति आक्सीजन देकर मानव को शक्ति प्रदान करते हैं। तथा वृक्ष–वनस्पतियाँ मानसून बनाने में सहायक होते हैं, इन तत्वों के द्वारा वृष्टि के चक्र को नियमित बनाने के लिये यज्ञ की आवश्यकता होती है। इस प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु ये सम्मिलित रूप से मानव जीवन का संचालन कर रहे हैं। इस संतुलन को बिगाड़ने के कारण प्रदूषण है। इन प्रदूषणों को रोकने के लिये वेदों में ये उपाय बताये गये हैं– 1 – वृक्षों को लगाना, 2– वृक्षों के काटने पर प्रतिबंध 3– वनों की सुरक्षा पर ध्यान देना, 4– यज्ञ के द्वारा वायु मण्डल को शुद्ध करना, 5– प्रदूषण–नाशक औषधियों और वृक्षों को लगाना, 6– जल, वायु और भूमि को प्रदूषित न करना। '**दिवः पृथिव्याः पर्योजउद्भृतम्, वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः।** (यजु. 29,53) द्यु–भू को प्रदूषित न करें– वेदों में अनेक मंत्रों में कहा गया है कि द्यु–भू को प्रदूषण से मुक्त रखें। यह भी आदेश दिया गया है कि हम ऐसा कोई कार्य न करें जिसे द्यु–भू आदि को हानि पहुँचे। ऋग्वेद में चेतावनी दी गई है कि यदि इनको प्रदूषित करते हैं तो विपत्ति और संकट (निर्ऋति) उपस्थित होंगे। यजुर्वेद के मंत्र में स्पष्ट कहा गया है कि द्यु–भू का परस्पर बराबरी का सम्बन्ध है। यदि हम द्यु–भू की रक्षा करेंगे तो द्यु–भू भी हमारी रक्षा करेंगे। यदि हम उनको प्रदूषित करते हैं, तो ये हमारे लिये संकट पैदा करेंगे। यथा–दुर्भिक्ष, भूकंप, खेती की बरबादी, ऊर्जा के स्रोतों में कमी, अतिवृष्टि और अनावृष्टि आदि का होना।

मु.पो. मुरारई,
जिला–वीरभूम (प. बंगाल) 731219
मो. 8158078011

आधुनिक युग में श्रवणकुमार की प्रासंगिकता

● **कृष्ण मोहन गोयल**

तुलसीदास जी ने रामकथा स्वान्तः सुखाय लिखी है। उन्होंने रामकथा की प्रशंसा करते हुए कहा है कि जिस प्रकार से हाथों से ताली बजा कर पक्षियों को उड़ाया जाता है उसी प्रकार रामकथा मानव मन से समस्त प्रकार के संशयों को दूर करने वाली है क्योंकि मानव जीवन संशयों से भरा हुआ है जिनके कारण वह दिग्भ्रमित हो जाता है जिसके लिए उसको मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ती है। तुलसीदासजी रचित रामकथा मार्गदर्शन कर समस्त प्रकार के संशयों का समाधान करके उनको दूर कर देती है।

रामकथा में तुलसीदास जी ने भगवान राम के चरित्र को तो सर्वोपरि स्थान दिया ही है इसके साथ–साथ अनेक ऐसे भी प्रसंग जो सर्वाधिक प्रेरणादायक हैं जिनमें केवट का राम को गंगा पार कराने का प्रसंग, हनुमान जी का भगवान राम को हर कदम पर उनके सुख–दुख में सहायता देना, भगवान राम के द्वारा केवल प्रेमवश होकर शबरी के जूठे बेर खाना, गिलहरी जैसा छोटा सा जन्तु भी भगवान राम के लिए समुद पर पुल बनवाने में सहायता करने को तैयार हो जाता है तथा श्रवणकुमार की माता–पिता भक्ति उल्लेखनीय हैं जिनकी प्रेरणा न केवल प्राचीन समय में प्रासंगिक थी अपितु आज भी प्रासंगिक है और भविष्य में प्रासंगिक रहेगी।

यह भारतीय संस्कृति में प्रचलित रहा है कि छोटे–छोटे बच्चे जब अपने माता–पिता, दादी–बाबा के साथ सोया करते थे तो उनके माता–पिता, दादी–बाबा उनको संस्कारवान बनाने के लिए ज्ञान से युक्त कहानियां सुनाया करते थे। जब वे बालक अपने गुरु के यहां शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाया करते थे तो वहा पर गुरु भी उनको संस्कारवान बनाने के लिए प्रेरणादायक कथाएं मानव, पशु, पक्षियों को कथा का मुख्य नायक बनाकर कहानियां सुनाया करते थे। 'हितोपदेश' तथा 'पंचतन्त्र' नामक पुस्तकें इस ही प्रकार की हैं जो विश्व में संस्कारवान बनाने के लिए प्रसिद्ध हैं। परन्तु समय के साथ–साथ अब संस्कारों का प्रायः अभाव देखा जा रहा है। माता–पिता, गुरु अपने पुत्रों, शिष्यों को संस्कारवान नहीं बना पा रहे हैं, परिणाम सामने है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि आज का नवयुवक सम्पन्नता की ओर अग्रसर है परन्तु वृद्धों की स्थिति दिन–प्रतिदिन दयनीय और जीर्णशीर्ण होती जा रही है। माता–पिता ज्यों–ज्यों वृद्धावस्था की ओर जा रहे होते हैं उनको अपनी तरुणता की ओर बढ़ रही सन्तानों के कन्धों की आवश्यकता बढ़ती जाती है। परन्तु अब तरुण श्रवण कुमार बनने को तैयार नहीं हैं। जबकि वृद्ध माता–पिता अपने जीवन की अंतिम सांसों में किसी श्रवण कुमार की राह देखते रहते हैं। क्यों लुप्त हो रहे हैं श्रवण कुमार? क्या अब श्रवण कुमार का चरित्र प्रासंगिक नहीं है? नहीं ऐसा नहीं है, केवल संस्कारों का अभाव है। यही नहीं विश्व के समस्त धर्मों ने अपने वृद्ध माता–पिता की सेवा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है।

उड़ीसा राज्य के गांव का एक सपूत एक दशक पूर्व आजीविका की तलाश में विदेश चला गया। सरस्वती और लक्ष्मी के वरदान से समस्त भौतिक सुविधाओं से परिपूर्ण होने पर भी उसे श्रवणकुमार का चरित्र याद आता रहता था। अचानक समस्त वैभवों को तिलांजलि देकर वह अपने वृद्ध माता–पिता की सेवा करने आ गया। उसने न केवल अपने वृद्ध माता–पिता की सेवा की अपितु आसपास के क्षेत्रों के वृद्धों की सेवा करके श्रवणकुमार नाम से प्रसिद्ध हो गया। क्या ऐसे तरुण आज फिर तुलसीदास जी के श्रवणकुमार को चरितार्थ कर सकेंगे?

भारतवर्ष अपनी संस्कृति के लिए ही विश्वगुरू कहलाता है। यहां की संस्कृति भी संस्कारों से परिपूर्ण है। साहित्य संस्कारों से भरा पड़ा है। संस्कार ही मानव को उसके जीवन की दिशा को मार्गदर्शित करते हैं। जो मानव संस्कार रहित हैं वे मानव रूप में होते हुए भी पशु के समान संसार में विचरण करते रहते हैं। उनको समाज भी आदर सम्मान नहीं देता है।

भारतीय संस्कृति में माता को सर्वोच्च स्थान दिया है। उसकी पदवी भगवान से भी ऊंची दी गयी है। बालक को जिसने जन्म दिया है उसको भारतीय संस्कृति में जननी कहा गया है। वाल्मीकि रामायण में भगवान राम ने लक्ष्मण से स्वयं कहा है – जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। उसके पश्चात् पिता का स्थान आता है और पिता को आकाश की पदवी दी गयी है। तत्पश्चात् गुरू का स्थान माना गया है जो मनुष्य को उसका पथप्रदर्शन करके उसको ईश्वर के दर्शन कराने में समर्थ है। उसकी महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है–

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरं।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः ॥

113–बाजार कोट
अमरोहा–244221

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 18-19 \11 \2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39 \57

आर्य समाज अनारकली ने भजन संध्या का सुन्दर आयोजन किया

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के मार्ग दर्शन से, आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग तथा दयानन्द मॉडल स्कूल ने सामूहिक रूप से दयानन्द मॉडल स्कूल गोल मार्किट के प्रांगण में भजन संध्या का सुन्दर आयोजन किया। इस भजन संध्या में न केवल डी.ए.वी. के गणमान्य पदाधिकारी जिनमें श्री अजय सूरी जी (प्रधान, आर्य समाज अनारकली) श्री एच. एल. भाटिया जी (उप–प्रधान, आर्य समाज अनारकली) ब्रिगेडियर श्री अदलखा जी (मंत्री, आर्य समाज अनारकली) श्रीमती प्रेम ढाकरान (प्रिंसिपल, डी.ए.वी. स्कूल बवाना) अपितु डी. आई जेड एरिया से.–3 गोल मार्किट के आर. डब्लयू. ए. के प्रधान श्री सिंह तथा सेक्रेटरी श्री. राणा और वहाँ रहने

वाले निवासियों ने उपस्थित होकर भजन संध्या को सुशोभित किया। पुरोहित श्री धनश्याम जी द्वारा सभी से पाँच मिनट के लिए ध्यान करवाया गया व गायत्री मंत्र का उच्चारण करवाया गया। दयानद मॉडल स्कूल के कुछ बच्चों ने 'गीता' के श्लोकों का मधुर गायन किया। इसके बाद विद्यार्थियों ने एक सुन्दर भजन भी प्रस्तुत किया। इसके बाद सी. एल.भल्ला. स्कूल की संगीत शिक्षिका, द्वारा सुन्दर भजन प्रस्तुत किए गए और तबले पर उनका साथ श्री विकास जी ने दिया। दयानंद मॉडल स्कूल मन्दिर मार्ग कि संगीत शिक्षिका ने भी सुन्दर भजन प्रस्तुत कर वातावरण को और भी संगीतमय बना दिया। कार्यक्रम की समाप्ति पर श्री.एच. एल. भाटिया जी ने सभी को प्रेम करें व प्रेम बाँटे की प्रेरणा देते हुए सभी सभाजनों को आशीर्वाद स्वरूप कुछ शब्द कहे। तत्पश्पात श्री अजय सूरी जी ने भी अच्छी बातो को ध्यान से सुनकर उन पर अमल करने की प्रेरणा दी। आर. डब्ल्यू. ए. के प्रधान श्री सिंह व सेक्रेटरी श्री राणा ने कार्यक्रम को काफी सराहा तथा डी.ए. वी. के पदाधिकारियों व विद्यालय की प्रिंसिपल श्रीमती स्नेह मोहन से समय–समय पर ऐसे कार्यक्रम करवाते रहने का अनुरोध किया। अंत में ब्रिगेडियर श्री अदलखा जी ने सभी को, विशेष रूप से सेक्टर तीन से आए निवसियों को धन्यवाद दिया तथा साथ ही आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग में होने वाले वर्षिकोत्सव की जानकारी दी तथा भारी संख्या में वहां उपस्थित होने के लिए आमंत्रित भी किया। कार्यक्रम की समाप्ति शान्तिपाठ के उच्चारण द्वारा हुई और उसके बाद सभी को प्रसाद का वितरण किया गया।

राष्ट्रीय हिन्दी संस्कृत समूहगान प्रतियोगिता में डी.ए.वी. स्कूल पलवल ने जीती चैम्पियनशिप ट्रॉफी

भारत विकास परिषद द्वारा आयोजित राष्ट्रीय हिंदी संस्कृत समूहगान प्रतियोगिता का आयोजन सरस्वती महिला महाविद्यालय मेंकिया गया जिसमें पलवल जिले के विभिन्न स्कूलों, कॉलेजों की छात्र छात्राओं ने भाग लिया। कार्यक्रम का शुभारम्भ दीप प्रज्ज्वलित करके किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ. अलका शर्मा ने की। इस अवसर पर सतीश कौशिक, स्वतन्त्र

गोयल, अनिल मोहन मंगला, प्रि. श्रीमती अलका गुप्ता आदि विशेष रूप से उपस्थित रहे। डी.ए.वी. स्कूल पलवल ने प्रथम संस्कृत समूह गान तथा हिन्दी समूह गान में प्रथम स्थान हासिल कर चैपियनशिप ट्रॉफी प्राप्त की। कार्यक्रम में चाहत, काजोल, भारती, नीरजा, मानव दीपेश, विनय आदि दात्र छात्राओं ने उत्साह पूर्वक भाग लिया। तबला पर ज्ञानेन्द्र सिंह ने साथ दिया तथा अन्य वाद्य यन्त्र में सन्तोष पॉल ने साथ दिया। विद्यालय के चेयरमैन डॉ. डी.ए.वी. सेठी एवं प्रबंधक डॉ सतीश आहूजा ने अभभावकों, शिक्षकों एवं छात्रों को चैंपियनशिप ट्रॉफी की बधाई दी। विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती अलका गुप्ता ने बताया कि हमारा विद्यालय शिक्षा संस्कार संस्कृति के मिशन को लेकर बढ रहा है, जो डी.ए.वी. संस्था का मुख्य उद्देश्य है यह डी.ए.वी. उसी पथ पर अग्रसर है।

पटेल नगर में डेंगू की रोकथाम के लिए हुआ सामूहिक हवन का आयोजन

डेंगू बुखार की रोकथाम के लिए तथा पर्यावरण को स्वच्छ एवम् पवित्र बनाने हेतु डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पश्चिमी पटेल नगर में एक विशेष हवन का आयोजन किया गया। हवन की मुख्य यजमान पाठशाला की प्रधानाचार्या रशिम गुप्ता जी थी! पाठशाला के प्रांगण में कक्षा पांचवीं से सातवीं तक के 200 बच्चों ने यज्ञ में भाग लिया! यज्ञ की सामग्री में डेंगू रोग को नाश करने वाली जड़ी बूटियों वाली प्राकृतिक पत्तियां डाली गई थीं। विद्वान शास्त्री जी ने पूर्ण विधि से मंत्रों का उच्चारण करके यज्ञ में आहूतियां डालीं तथा प्रधानाचार्य तथा अध्यापिकाओं ने बड़ी श्रद्धा से आहूतियां डालीं। शास्त्री जी ने अपने प्रवचन में बच्चों को डेंगू रोग तथा अन्य रोगों की रोकथाम के कारण तथा उपाय बताए। बच्चों के अच्छे स्वास्थ्य की प्रार्थना की गई। यज्ञ की आरती के बाद प्रसाद वितरण किया गया।

डी.ए.वी. स्कूल फिल्लौर में ग्रामीण खेलों को मिला प्रोत्साहन

डीआरवी डीएवी शताब्दी पब्लिक स्कूल, फिल्लौर में डी.ए.वी. नैशनल स्पोर्ट्स के अंतर्गत क्लस्टर स्तर पर कबड्डी टीमों ने भाग लिया। अपने खेल का बेहतरीन प्रदर्शन करते हुए खिलाड़ियों ने खेल भावना का परिचय दिया। पंजाब खेल विभाग की ओर से श्री सुखविन्दर सिंह, श्री बलबीर

सिंह तथा श्री सुच्चा सिंह विशेष अतिथि के रूप में कार्यक्रम में उपस्थित रहे। पुलिस डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, जालंधर की लड़कियाँ तथा लड़कों की टीमें विजेता रहीं। उपप्रधानाचार्या श्रीमती रीटा कालिया ने विजेता टीमों के खिलाड़ियों को ट्राफी तथा प्रमाण–पत्र प्रदान किए। श्रीमती कालिया ने कहा कि खेलों के प्रति रुझान व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। डी.ए.वी. संस्था नेशनल स्पोर्टस के द्वारा विद्यार्थियों के सकारात्मक विकास के प्रति कटिबद्ध है। खेल बच्चों को जहाँ स्वस्थ मानसिकता प्रदान करते हैं, वहीं कई सामाजिक बुराईयों से भी दूर रखते हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**